आर्य प्रतिनिधि सभा म.प्र. व विदर्भ का मुख पत्र | जुन-जुलाई २०१७

आर्य सेवक

श्रावणी पर्व वेद प्रचार सप्ताह रक्षाबंधन से श्रीकृष्ण जन्माष्टमी तक धूम-धाम से मनाये।

सभा कार्यालय - दयानन्द भवन, मंगलवारी बाजार, सदर, नागपुर (महाराष्ट्र)

।। ओ३म्।।

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। महर्षि दयानन्द

परमेष्ठी प्रजापतिः। यज्ञः = स्पष्टम्। स्वराडार्षी त्रिष्टुप। धैवतः।।
स यज्ञः कीदृशो भवतीत्युपदिश्यते।।
वह यज्ञ कैसा है, इस विषय का उपदेश किया है।।

ओ३म् पवित्रमसि द्यौरसि पृथिव्यसि मातरिश्वनो घर्माऽसि विश्वधाऽअसि।
परमेण धाम्ना दृँहस्व मा ह्वार्मा ते यज्ञपतिर्ह्वार्षीत्।।२।।(यजु.१/२)

पदार्थ : (वसोः) वसुः **(पवित्रं)** पुनाति येन कर्मणा तत् **(असि)** भवति। **(द्यौः)** विज्ञानप्रकाशहेतुः **(असि)** भवति **(पृथिवी)** विस्तृतः **(असि)** भवति **(मातरिश्वनः)** मातरि अन्तरिक्षे श्वसिति आश्वनिति वा तस्य वायोः। अग्नितापयुक्तः शोधकः। **(असि)** भवति **(विश्वधाः)** विश्वं दधातीति **(असि)** भवति **(परमेण)** प्रकृष्टसुखयुक्तेन **(धाम्ना)** सुधानि यत्र दधति तेन। **(मा)** निषेधार्थे **(ह्वार्षीत्)** ह्वरतु ह्वर वा।

सपदार्थान्वयः हे विद्वन्मनुष्य! त्वं यो वसोः=वसुरयं यज्ञः, पवित्र मसि=पवित्रकारकोऽस्ति (पवित्रम्=पुनाति येन कर्मणा तत्, असि=भवति), **द्यौरसि=सूर्यरश्मिस्थो भवति** (द्यौः= विज्ञानप्रकाशहेतुः, असि=भवति), **पृथिव्यसि= वायुना सह विस्तृतो भवति** (मातरिश्वनः= मातरि=अन्तरिक्षे श्वसिति आश्वनिति वा तस्य वायोः, धर्मः=अग्नितापयुक्तः शोधकः, असि=भवति) **विश्वधाअसि=संसारस्य सुखधारको भवति** (विश्वधाः=विश्वं दधातीति, असि=भवति) **परमेण** प्रकृष्टसुखयुक्तेन **धाम्ना** सुखानि यत्र दधति तेन **सह दृंहस्व=दृंहते=वर्धते।**

तमिमं यज्ञं मा ह्वाः=मा त्यज, (ह्वाः=ह्वरतु), **तथा-ते=तव यज्ञपतिः** यज्ञस्य स्वामी, यज्ञकर्ता=यजमानः। धात्वर्थाद्यज्ञार्थस्त्रिधा भवति- विद्या-ज्ञानधर्मानुष्ठानवृद्धानां देवानां विदुषामैहिकपार- मार्थिकसुखसम्पादनाय सत्करणं, सम्यक्पदार्थ-गुणसंमेलविरोधज्ञानसंगत्या शिल्पविद्याप्रत्यक्षी करणं नित्यं विद्वत्समागमानुष्ठानं, शुभविद्यासुखधर्मादिगुणानां नित्यं दानकरिणामिति, **तं मा ह्वार्षीत्=मा त्यजतु** (ह्वार्षीत्=ह्वर वा)।।१।२।।

भाषार्थ : हे विद्वान् मनुष्य! तू जो **(वसोः)** यज्ञ **(पवित्रम्)** पवित्र करने वाला **(असि)** है, अर्थात् पवित्र करने वाला कर्म है, **(द्यौः)** सूर्य की किरणों में स्थिर और विज्ञान प्रकाश का हेतु (असि) है, **(पृथिवी)** वायु के साथ देश-देशान्तरों में फैलने वाला **(असि)** है, तथा **(मातरिश्वनः)** वायु का **(धर्मः)** शोधक **(असि)** है, अर्थात्-अन्तरिक्ष में गति करने से वायु का नाम मारिश्वा है, उस वायु का **(धर्मः)** अग्निताप से शोधक है, (विश्वधा) संसार के सुख को धारण करने वाला **(असि)** है एवं विश्व का धारक है, **(परमेण)** उत्तम सुख से युक्त **(धाम्ना)** लोक के साथ **(दृहस्व)** बढ़ता है।

उस यज्ञ का **(मा ह्वाः)** त्याग मत कर तथा (ते) तेरा **(यज्ञपतिः)** यज्ञ का स्वामी, यज्ञकर्ता=यजमान भी उसे **(मा ह्वार्षीत्)** न छोड़े। धात्वार्थ के कारण यज्ञ शब्द का अर्थ तीन प्रकार का होता है।

१. विद्या, ज्ञान और धर्माचरण से वृद्ध विद्वानों का इस लोक और परलोक के सुख की सिद्धि के लिए सत्कार करना, २- अच्छी प्रकार पदार्थों के गुणों के मेल और विरोधज्ञान की संगति से शिल्प विद्या का प्रत्यक्ष करना एवं नित्य विद्वानों का संग करना, ३- शुभ विद्या, सुख धर्मादि गुणों का नित्य दान करना।।

ओ३म्

आर्य सेवक

आर्य प्रतिनिधि सभा म. प्र. व विदर्भ का मुखपत्र

वर्ष – ११६ अंक १३
सृष्टि संवत १९६०८५३११७
दयानन्दाब्द – १९२
संवत – २०७४
सन् २०१७ जुन–जुलाई

प्रधान
पं. सत्यवीर शास्त्री, अमरावती
मो.नं. ०९४२२१५५८३६

मंत्री एवं प्रबंधक सम्पादक
अशोक यादव
मो. ०९३७३१२११६३
०९५११८३८९८१

सम्पादक एवं उपप्रधान
जयसिंह गायकवाड़, जबलपुर
मो. ०९४२४६८५०९१
e-mail : jasysinghgaekwad@gmail.com
निवास - ५८०, गुप्तेश्वर वार्ड,
कृपाल चौक, मदन महल, जबलपुर

सह सम्पादक
प्रा. अनिल शर्मा, नागपुर
मो. ९३७३१२११६४
मनोज शर्मा
मो. ९५६१०७९८९४

कार्यालय पता :
दयानन्द भवन, मंगलवारी बाजार,
सदर, नागपुर-४४०००१ महाराष्ट्र
दूरभाष क्र. ०७१२-२५९५५५६

अनुक्रमणिका

क्र.	लेख	लेखक	पृष्ठ क्र.
१.	ऋत सत्य और सत्य का रहस्य	पं. उम्मेदसिंह विशारद	२-३
२.	आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओंसे अपेक्षाएं-भूत वर्तमान एवं भविष्य	प्रो.स्व. इंद्रदेवसिंह आर्य	४-५
३.	प्रभो! हमें ज्ञान दो, हमें काम दो	प्रो. रामप्रसाद वेदालंकार	७-१०
४.	ओम परिसर दुर्ग में लोकार्पण		१०
४.	वेदों में निराकार-ईश्वरोपासना	स्वामी वेदानंद सरस्वती	११-१३
५.	आर्य समाज मंदिर वर्धा के चुनाव		१३
६.	गुरूकुल-शिक्षा के उत्तम श्रोत	डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह	१४-१६
७.	कविता - करो भारत से ही अनुराग	विद्यासागर शास्त्री	१६
८.	कविता-उठो भारत की आशा	विद्यासागर शास्त्री	१६
९.	वेद, हम और हमारी मानसिकता	डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह	१७-१८
१०.	शोक सभा		१८
११.	नकली भगवान	धर्मवीर	१९
१२.	आर्यावत का वह आर्यवीर-चंद्रशेखर आजाद	प्रियवीर हेमाईन	२०-२२
१३.	तप की महिमा		२३-२४

==000==

टीप - प्रकाशित कृतियों में व्यक्ति विचार लेखकों के हैं इनसे आर्य सेवक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

।। ओउम्।।

ऋत सत्य और सत्य का रहस्य

ऋंत सत्य :

ईश्वर ऋत सत्य है और भूत, भविष्य व वर्तमान का व्यवहार ऋत सत्य में नही होता है। वह तीनो कालों के चपेट में नही आता है। अतः सत्य शब्द केवल मनुष्य से ही सम्बंन्ध रखता है। ईश्वर से नही और सत्य सदैव ऋत सत्य की अपेक्षा असत्य होता है। संसार के सारे व्यवहार सत्य के आधार पर होते है वहा संयोग व वियोग अवश्य होता है। परन्तु ईश्वर रूपी ऋत सत्य में संयोग, वियोग नही होता है, सदैव संयोग रहता है। अतः वास्तविक सत्य तो ऋत सत्य है। हम संसार में जो जो पदार्थ प्राणीयों के कल्याण के लिये ईश्वर द्वारा प्रदत है उनके गुण कार्य स्वभाव सदैव एक रस रहते है वह कभी नही बदलते है जैसे सूर्य का प्रकाश चन्द्रमा की शीतलता, वायु का प्रवाह, अग्नि की उष्णता, जल की प्राणादायिनी शक्ति, धरती की ऊर्जा शक्ति, फलो मे खटास, मिठास, उसी मे अन्दर बीज की उत्पत्ती तथा ब्रह्ममण्ड की उत्पति, स्थिति व प्रलय, प्राणियो में उत्पति मे की स्वाभाविक प्रवृति, शरीर के इन्द्रियो के गुण कार्य कभी नही बदलते, प्राणीयों का जन्म व मृत्यु नियमानुसार, आत्मा की नित्यता, आदि मे सम्पूर्ण ब्रह्ममण्ड में अदृश्य रूप से ऋत सत्य व्यवहार कार्य कर रहा है। इसलिये यह गूड रहस्य हैं। ऋत सत्य द्वारा पदार्थों के गुण हमे सहज में प्राप्त हो रहे है इसलिए उनके प्रति हमारा ध्यान नही जाता है। इसलिए जीवन दायिनी पदार्थ ऋत सत्य सदैव हमें प्राप्त है वह ईश्वर द्वारा प्रदत है।

सत्य :

मानवीय जगत में व्यवहारिक रूप में जो जो कर्म किये जाते है यदि वह कार्य आदान प्रदान में सच्चे है तो वह सत्य है यदि व्यवहार में छल कपट है तो असत्य, है मानवीय जगत में कर्म गुण कर्मानुसार बदलते रहते है। यदि मानवीय व्यवहार में प्रत्येक कर्म को सच्चाई से सत्य के आधार पर किये जाऐ, तो शान्ति बनी रहती है। ईश्वर ने मानव को कर्म करने को स्वतन्त्र रखा है, और सत कर्म और असत्य कर्म मनुष्य के विवेक, पर निर्भर होते है तथा व्यवहारिक सत्य देश काल परिस्थितिनुसार बदलता रहता है।

जरा गहराई से विचार करे तो संसार में जो हमें दीखता है वह असत्य है और जो नही दिखता वही सत्य है। जो चलायमान है वह अस्थिर है, परिवर्तनशील है। वास्तव में वह अचलायमान स्थिर तथा अपरिवर्तन शील तत्व के आधार पर टिका हुआ है। हर गति तथा अगतिशिलता अचल, स्थिर अप्रवर्तन शील तत्व के कारण टिकी हुई है। जैसे वृक्ष दृश्य है तो बीज अदृश्य है। शरीर दृश्य है तो आत्मा अदृश्य है। इसी प्रकार संसार के प्रत्येक द्दश्य परिवर्तन शील है और उसके आधार ईश्वर और उसके गुण अपरिवर्तन शील है। आइए विचार करते है।

आत्म श्रद्धा का आधार सत्य है:

भारतवर्ष का इतिहास बताता है कि महाभारत काल के बाद ईश्वरीय धर्म वेदानुकूल प्राचीन पद्धति के अनुसार, सत्य पर आधारित मान्यताओं को सदैव के लिये प्रचारित करने के लिये एक सत्य का मंच आर्य समाज के संस्थापक, एक मात्र महर्षि दयानन्द सरस्वती जी थे। उन्होंने दो कार्य बहुत ही उत्तम सर्वहितकारी किये एक सत्यार्थ मार्ग जानने हेतु अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश की रचना की और दूसरा कार्य मानव जीवन को सुखी व सत्यमार्गी बनाने के लिये संस्कार विधि अर्थात जन्म से मृत्यु तक १६ संस्कारों को करने का विधान किया।

प्रत्येक मनुष्य की अपनी आत्म श्रद्धा या आत्म गौरव की एक तोल होती है, यह तौल क्या हैं अपनी वाणी विचार और क्रिया के सत्य असत्य के विवेचन का वह एक माप है, जिसमे वह अपने सम्बन्ध की मान्यता को स्थिर

करता है। मनुष्य जितना सत्य से विमुख होगा उतना ही अपने आप में अश्रधालु बनता है। जिसने सत्य का परित्याग कर दिया समझो उसने अपने लिये सुख का मार्ग अवरूद्ध कर दिया।

सत्यमेव जायते नानृतम सत्य की जय होती है असत्य की नही, सत्य से बढ़कर कोई धर्म नही है। आत्मा स्वंय शाश्वत सत्य है। सत्य सरल भी है और स्वाभाविक भी है। यदि तुच्छ अहंकार और स्वार्थ मयता को प्रमुख न बनाया जाए तो सत्य तथ्य छिपाने की आवश्यकता ही न पड़े। सत्य की अभिव्यक्ति से ही जीवन की जटिलता का समाधान हो सकता है।

आत्मा के ऐंश्वर्य और सत्य के शाश्वत स्वरूप को शाश्वत बनाऐ रखने के लिये, सत्य बोलना, सत्य पर चलना, ऋत सत्य पर आधारित मान्यताओं को मानना ही जीवन का अर्थात जीव का प्रमुख कृत्य है। सत्य धारी को ईश्वर को ढूंढने जाने के लिए भटकने की आवश्यकता नही है वह आत्मा मे ही ईश्वरीय दर्शन का आनन्द लेताहै। सत्य जीवन की मधुरता है जीवन की पूर्णता है।

सांच बराबर तप नही, झूठ बराबर पाप।

जाके हृदय सांच है ताके हृदय आप।।

हम असत्य को सत्य अस्थिर परिवर्तनशील को अपरिवर्तन शील, क्षण झंगुर को सनातन और प्रतीतो के प्रति जागे हुए है और प्राप्त के प्रति सोए हुए है। असत्य के प्रति जागे हुए है और सत्य के प्रति सोये हुए है। जीवन का लक्ष्य सत्य जानना है। हमारा जीवन असत्य में बीत रहा है, हम चारों और से असत्य से घिरे हुए है। क्योंकि ऋत सत्य सर्वव्यापक है और निकटतम होने के कारण अद्रश्य है। सत्य हमारे जन्म से पहले भी था और हमारी मृत्यु के बाद भी रहेगा, इसलिए हमारी खोज का विषय ऋत सत्य ही होना चाहिए।

सत्य असत्य के मूलगत भेद क्या है।

विश्व ऋत सत्य के आधार पर टिका हुआ है। असत्य वस्तु असत्य विचार, असत्य संस्था के भीतर उसके तोड़ने वाले तत्व रहते है, इसी के अर्न्तद्वन्द कहते हैं। असत्य के पेट में पड़ा जो अन्दर का विरोध है, वह सत्य को धीरे-धीरे फोड़ता जाता है और असत्य के भीतर सत्य अपने पैने पन से उभर आता है। क्योंकि सत्य दुविधा रहित व द्वेष रहित होता है। जहां भीतर सत्य और असत्य होंगे वहीं तो संघर्ष होगा। हमने जितनी भी संस्थाऐं व धर्म सम्प्रदाय बनाऐ है उनका प्रमुख लक्ष्य सत्य को टूटना है। कोर्ट में वकील सत्य को टूटने के लिये ही तो लड़ते है और जज का कार्य सत्य असत्य को ढूंढ़ निकालना है। तभी वेदों ने कहा है सारा संसार ऋत सत्य पर टिका हुआ है।

निष्कर्ष :

वेद, उपनिषिद, दर्शन शास्त्र, ब्रह्मण ग्रन्थ तथा जो वेदानुकूल आर्ष ग्रन्थ है उसमें वर्णित शिक्षा और संसार में सत्यवादी सत्यपथ गामी युग पुरूषो ने सत्य को जाना और प्रचार करते-करते अपने जीवनो की आहूति दे दी। यदि संसार के सभी धर्म सम्प्रदाय संगठन सत्य और ऋत सत्य पर व्यवहारिक चलने का आवाहन करे तो, मानव समाज मे तमाम अन्धविश्वास रूढ़ी वादिता उग्रवाद हिंसा द्वेष, समाप्त हो जायेगे। जिस दिन हम सत्य और ऋत सत्य को समझ जायेंगे और तदानु कुल व्यवहार करने लगेंगे बस उसी दिन से हम ईश्वर को समझ सकेंगे और तब हम किसी भी जगह खड़े होंगे तो यही कहेंगे सत्य मेव जयते नानृतम।

पं. उम्मेद सिंह विशारद
वैदिक प्रचारक
गढ़निवास मोहकमपुर, देहरादून-उत्तराखण्ड
मो. ९४११५१२०१९, ९५५७६४१८००

आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओं से अपेक्षाएं – भूत, वर्तमान एवं भविष्य

प्रो. स्व. इन्द्रदेव सिंह आर्य
एम.एस.सी., एम.ए. (संस्कृत),
एल.एल.बी., साहित्य रत्न, नागपुर

अपने जीवन के प्रारम्भिक और यौवनकाल में आर्यसमाज ने प्रचण्ड पौरुष, शक्ति तथा कर्मठता का परिचय दिया था। आर्य समाज के जन आंदोलन को विश्व के विद्वानों ने विभिन्न दृष्टि बिन्दुओं से देखा। सहस्त्रों मील दूर स्थित अमेरिका के एक अध्यात्मवादी और योगी श्री एण्ड्र जैक्सन डेविस ने आर्य समाज को एक प्रचण्ड ज्वाला के रूप में देखा जो अंधविश्वास, गतानुगतिकता, अज्ञान एवं अभाव को भस्मीभूत कर भूमण्डल को आलोकित करता हुआ आगे बढ़ रहाहै। एक आंगल पत्रकार वेलेन्टाइन शिरोल ने इसके उद्देश्यों और सिद्धांतों में विद्रोह की चिन्गारियों को देखा और यह भविष्यवाणी की कि यदि समय रहते इसकी विद्रोहात्मक प्रवृत्तियों को रोका न गया तो यह भारत से आंगल सत्ता का उच्छेद कर देगी। इतिहास इस बात का साक्षी है कि ये दोनों भविष्यवाणियाँ बहुत अंश तक सत्य सिद्ध हुई हैं। साथ ही धर्म में बुद्धिवाद और तर्क को प्रविष्ट कर एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की आर्य समाज की सर्वप्रमुख प्रवृत्ति रही है। इसके साथ ही आर्य समाज ने समाज सुधार के क्षेत्र में व्यापक एवं क्रांतिकारी कार्यक्रम उपस्थित किया है। जातपाँत, बालविवाह, अनमेल विवाह, पर्दा प्रथा आदि हानिकारक कुरीतियों का अन्मूलन कर हिन्दूसमाज को सशक्त एव प्राणवान् बनाने के लिए आर्य समाज सदा कटिबद्ध रहा है। आर्य समाज ने दलित, शोषित तथा पीड़ित वर्गों को समुन्नत करने एवं जन्मगत जात्यभिमान को नष्ट करने के लिए अतुलनीय प्रयत्न किया। नारी जागरण और नारी शिक्षण के कार्यक्रम में भी आर्य समाज ने अग्रदूत का कार्य किया। यही नहीं आर्य समाज के अनुयायियों ने देश के स्वाधीनता संग्राम में जो योगदान दिया वह भी स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा।

राष्ट्रीयता के सूत्रों को विकसित करने वाले वेदानुयायी आर्य समाज के लिए यह स्वाभाविक था कि वह स्वदेशी, स्वभाषा एवं स्वसंस्कृति तथा शिक्षा के क्षेत्रों में भी वह विदेशी अनुकरण की प्रवृत्ति को तिजांजजि दे। उच्च स्तरीय शिक्षण भी राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम से हो सकता है इसे आर्य समाज द्वारा स्थापित गुरुकुलों ने क्रियात्मक रूप दिया। साथ ही आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द की यह मान्यता थी कि स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग को प्रोत्साहित करना अत्यावश्यक है। आर्य समाज के सदस्य वस्त्रों और दैनन्दिन प्रयोग की अन्य वस्तुओं में स्वदेश निर्मित चीजों को महत्व देते थे क्योंकि भारत की उन्नति स्वदेशी कला कौशल की उन्नति पर निर्भर है।

देश में शासन द्वारा शुरू की गई शिक्षा पद्धति आर्य समाज की दृष्टि में सुयोग्य नागरिकों के निर्माण में बाधक थी। अतः आर्य समाज ने अपने तत्वावधान में दो प्रकार की शिक्षण संस्थाओं को जन्म दिया। अंग्रेजी भाषा के साथ साथ लोकोपयोगी विषयों की शिक्षा देने के हेतु दयानन्द ऐंग्लो वैदिक (डी.ए.बी.) हाई स्कूल और कॉलेज खोले गए जहाँ सामान्य ज्ञानवृद्धि के साथ साथ छात्र वर्ग में स्वधर्म, स्वराष्ट्र और स्वसंस्कृति के प्रति अनुराग उत्पन्न करने में सहायता मिलती थी। फिर महान राष्ट्र भक्त एवं शिक्षाशास्त्री स्वामी श्रद्धानन्द (पूर्व के महात्मा मुंशीराम) ने गुरुकुल कांगडी की स्थापना हरिद्वार में गंगा के पार की। यहाँ से निकले वेदनिष्णात स्नातकों –वेदालंकार, सिद्धान्तालंकार, आयुर्वेदालंकार, विद्यालंकार आदि उपाधिधारी विद्वानों ने आर्य समाज के गौरव में चार चांद लगा दिए। इसके अनुकरण में अन्य गुरुकुल गुजरात और पंजाब में खोले गए और कन्याओं के लिएजालंधर, देहरादून, हाथरस आदि स्थानों में भी कन्या गुरुकुल खोले गए जिसने स्त्री जाति की जागृति का कार्य किया। इसके पूर्व तो हमारे पुराणपंथी

भाई नारी शिक्षा जैसे सर्व सम्मत कार्य को भी तिरस्कार की दृष्टि से देखते थे। मध्यकालीन धर्माचार्यो ने नारी के प्रति जो उपेक्षा और अवमानना की धारणाएं व्यक्त की थीं उनके उन्मूलन द्वारा उसे पुरुष के तुल्य सम्मान और अधिकार प्राप्त कराना आर्य समाज की एक प्रशंसनीय उपलब्धि है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जहाँ आर्य समाज ने अपनी प्राचीन संस्कृति और इतिहास की ओर देश का ध्यान पुनः वेद की ओर के नाद से आकर्षित किया वहाँ शिक्षा प्रसार के क्षेत्र में भी आर्य समाज की उपलब्धियाँ अत्यंत गौरवशाली हैं। समाज के उत्साही कार्यकर्ताओं ने आर्य समाज के अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करने के संदेश को सुना, समझा और उसे क्रियात्मक रूप दिया। आज दयानन्द ऐंग्लो वैदिक शिक्षा संस्थाएं देश भर में फैली हुई हैं और लाखों लोगों को ज्ञान दान देने को महान कार्य कर रही हैं। राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक शिक्षा की महान संस्थाओं के रूप में आज इनकी गुणना होती है। पाश्चात्य ढंग की शिक्षा की उपादेयता के महत्व को स्वीकार करने वाली इन शिक्षण संस्थाओं ने अपनी प्राचीन परिपाटी को एक दम विस्मृत नहीं किया। प्राचीन गुरुकुल प्रणाली के आदर्श को लेकर चलने वाली संस्थाओं और डी.ए.वी. संस्थाओं में कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है। अपने अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अपने अपने ढंग से जनसेवा करना ही इनका ध्येय है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि आर्य समाज अपने शिक्षा क्षेत्रीय कार्य का गंभीरता से सिंहावलोकन करे और बिनाकिसी पूर्वाग्रह के इन संस्थाओं द्वारा महर्षि दयानन्द निर्दिष्ट शिक्षा पद्धति की पूर्ति में इन संस्थाओं द्वारा किए गए कार्य की निष्पक्षपात समालोचना करे। ऐसा करने पर हमें स्पष्ट दिखाई देगा कि महर्षि दयानन्द ने शिक्षण संस्थाओं में गरीब और अमीर के भेद को मिटाने का आग्रह किया था। यद्धपि गुरुकुलों में एक सीमा तक इसका पालन होता है, डी.ए.वी. संस्थाएं प्रवेशेच्छुओं से इतनी मोटी राशियाँ दान के रूप में ऐठती हैं जिससे सच पूछो तो गरीबों को वहाँ प्रवेश पाना सरल नहीं रह गया है। इसके बाद भी उनकी फीसें काफी मोटी ही रहती हैं। साथ ही महर्षि की आज्ञा के विरूद्ध उनमें लड़के-लड़कियों की सहशिक्षा जारी है। अधिकांश अध्यापिकाएं फैशन के लिए पाउडर तथा लिपस्थिटक आदि वस्तुओं का प्रयोग कर सादा जीवन और उच्च विचार के नियमों का उल्लंघन करती हैं।

यद्यपि आर्य समाज के गुरुकुलों में महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित वैदिक शिक्षा एवं संस्कृति की रूपरेखा का अनुसरण करने का प्रयत्न किया जाता हरहा है फिर भी यह प्रश्न उठना अनिवार्य है कि क्या इन गुरुकुल विद्यालयों में महर्षि द्वारा सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में पठन पाठन विधि के अन्तर्गत निर्दिष्ट व्याकरण के अध्ययन के लिए महर्षि पाणिनि कृत अष्टाध्यायी एवं फिर महर्षि पतंजलि कृत व्याकरण महाभाष्य का अध्यापन होता है अथवा नहीं। महर्षि दयानन्द और उनके गुरु स्वामीा विरजानन्द आर्ष ग्रंथों के पठन पाठन के समर्थक थे क्योंकि महान् आशय वाले महर्षियों के महान विषयों को जिस सरलता से अपने ग्रंथों में प्रकाशित किया है वैसा क्षुद्राशय मनुष्यों के कल्पित ग्रंथों से कैसे हो सकता है? आर्ष ग्रंथों का पढ़ना ऐसा है कि जैसे एक गोता लगाना और बहुमूल्य मोतियों का पाना और स्वार्थी सांसारिक मनुष्यों के ग्रंथों का अध्ययन ऐसा है कि पहाड़ को खोद कर कौड़ी प्राप्त करना। आजकल कुछ गुरुकुल अपने नाम के साथ आर्ष शब्द को लगा रहे हैं जिससे अनुमान होता है कि इन संस्थाओं में केवल आर्ष ग्रंथों का पठन पाठन होता है। वास्तविक स्थिति का विस्तृत अध्ययन एवं परीक्षण करना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि न केवल व्याकरण के लिए अपितु समग्र वैदिक साहित्य के अध्ययन के लिए जिन आर्ष ग्रंथों का महर्षि ने उल्लेख किया है उनका अध्ययन अध्यापन किए बिना कोई भी व्यक्ति पूर्णतः वैदिक साहित्य का पंडित नहीं बन सकता।

हमारा अनुमान है कि महर्षि दयानन्द ने विद्याध्यन के लिए २१ वर्ष का जो समय सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में बतलाया है उसकी गण्ना में कुछ त्रुटि रह गई है। इस विषय पर हम कुछ विस्तार से विचार करना

आवश्यक समझते हैं। महर्षि ने आर्ष ग्रंथों के पठन पाठन की योजना इस प्रकार प्रस्तुत की है :

१.	पाणिनि अष्टाध्यायी व महाभाष्य	– ३ वर्ष
२.	निघण्टु और निरुक्त तथा छन्दोग्रंथ	– १ वर्ष
३.	मनुस्मृति, वाल्मीकि रामायण विदुरनीति	– १ वर्ष
४.	षडदर्शन एवं उपनिषद	– २ वर्ष
५.	चारों ब्राहम्हण ग्रंथ व चारों वेद	– ६ वर्ष
६.	आयुर्वेद, गाँधर्ववेद, अर्थवेद (प्रत्येक लगभग चार वर्ष)	– १२ वर्ष
७.	राजविद्या, प्रजाविद्या	– ४ वर्ष
८.	ज्योतिष शास्त्र २ वर्ष	– योग ३१ वर्ष

महर्षि ने संस्कार विधि में भी कुछ भेद होने पर भी अध्ययन काल ३१ वर्ष लिखा है। यह प्रश्न उठना भी स्वाभाविक है कि पाणिनी और महाभाष्य पढ़ने की योग्यता प्राप्त करने और मातृभाषा के अध्ययन के लिए विद्यार्थी लगभग ४ वर्ष लगना चाहिए। अतः यदि पाँच वर्ष की आयु से बालक पढ़ना आरम्भ करे तो वह प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने तक ९ वर्ष का हो जाएगा। अतः ३१ वर्षों तक शिक्षा प्राप्त करने के उपरांत उसकी न्यूनतम आयु ४० वर्ष होगी। आज के युग में हम यह भी मान लेते हैं कि इसके साथ साथ विद्यार्थी को कुछ अंग्रेजी भाषा का ज्ञान और इतिहास भूगोल आदि भी पढ़ना अनिवार्य होना चाहिए अन्यथा वैदिक साहित्य का विद्वान कूप मंडूक ही रह जाएगा। इन विषयों के अध्ययन के लिए हम पृथक काल गणना आवश्यक नहीं समझते फिर भी आज के युग में क्या कोई भी साधारण व्यक्ति ४० वर्ष की आयु तक अध्ययन करता रहेगा यह क्रियात्मक (practical) दृष्टि से ठीक नहीं जंचता। हमारे गुरुकुलों आ.डी.ए.वी. संस्थाओं में इतना विस्तृत वैदिक शिक्षा का कार्यक्रम अब तक तो नहीं बनाया गया है परन्तु यह कहा जा सकताहै कि गुरुकुलों और डी.ए.वी. संस्थाओं में सामान्य विद्यार्थी को स्नातक उपाधि प्राप्त करने के लिए १०+२+३ अर्थात १५ वर्ष लगते हैं। स्नातकोत्तर शिक्षा के २ वर्ष मानकर १७ वर्ष में वह स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त कर सकता है। इसके उपरांत यदि वह विद्यावाचस्पति अर्थात् पी.एच.डी. की अनुसंधात्मक उपाधि प्राप्त करे तो उसे न्यूनतम ३ वर्ष लगते हैं। इस प्रकार २० वर्ष के शिक्षण काल में वह आज की उच्चतम उपाधि प्राप्त कर लेता है अर्थात् ५ वर्ष की आयु में विद्यारम्भ होने पर २५ वर्ष की आयु में आज की आधुनिक शिक्षा पद्धति के अनुसार उच्चतम उपाधि प्राप्त कर सकताहै। ऐसी स्थित में महर्षि दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट वैदिक साहित्य और संस्कृति का पूर्ण विद्वान बनने के लिए ४० वर्ष की आयु पर्यन्त अध्ययन करने का संकल्प करने वाले कितने विद्यार्थी आगे आएंगे? हो सकता है कि गुरुकुलों या डी.ए.वी. संस्थाओं में अध्यापन करने वाले कुछ महानुभाव इस शुभ संकल्प को पूरा कर सकें। गुरुकुलों और डी.ए.वी. संस्थओं से हम अनुरोध करेंगे कि वे ऐसे दृढ़ निश्चयवान् एवं विद्याप्रेमी विद्यार्थियों अथवा अध्यापकों को प्रोतसाहन दें तथा उन्हें पर्याप्त छात्रवृत्तियाँ देकर वैदिक साहित्य एवं संस्कृति का अध्ययन करने के लिए आवश्यक सभी सुविधाएं प्रदान करें जिससे महर्षि दयानन्द का संसार को वेद विद्वान प्रदान करने का स्वप्न पूरा हो सके और आर्य समाज को कृणवंतो विश्वमार्यम् के ध्येय की ओर हम अग्रसर हो सकें तभी आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओं द्वारा आर्य समाज विश्व को वेद विद्या पारंगत विद्वान प्रदान कर सकेगा। इस सम्बन्ध में हम कृपालु विद्वानों के सुझाव आमन्त्रित करते हैं।

स्वामी दयानन्द का शिक्षा दर्शन भारत की परिस्थितियों के लिए सर्वथा अनुकुल तथा आचरणीय है।

--000--

प्रभो! हमें ज्ञान दो, हमें काम दो....

प्रो. रामप्रसाद वेदालंकार

ऋषिः- वसिष्ठः। देवता- इन्द्रः। इन्छः- छन्दः- बृहती।

इन्द्र क्रतुं न आभर पिता पुत्रेभ्यो तथा।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि।।

सा. २५६।ऋ. ७.३२.२६।।

अन्वयः- इन्द्र / नः क्रतुम् आभर, यथा पिता पुत्रेभ्यः। पुरुहूत! अस्मिन् यामनि नः शिक्ष। जीवाः ज्योतिः अशीमहि।

अन्वयार्थः- (इन्द्र! नः क्रतुम् आभर) हे परमेश्वर! हमारे लिए ज्ञान दोन, प्रज्ञान दो, काम दो, यज्ञमय शुभ कार्य दो। काम दो, यज्ञमय शुभ कार्य दो। ऐसे (यथा पिता पुत्रेभ्यः।) जैसे कि पता पुत्रों के लिए देता है।

(पुरुहूत! अस्मिन् यामनि नः शिक्ष) हे बहुतों से पुकारे जाने वाले परमात्मन! इस जीवन में- इस संसार यात्रा में हमें शिक्षा दो, ताकि (जीवाः ज्योतिः अशीमहि) जीते हुए ही हम तेरी दिव्य ज्योति को पा सकें।

हे इन्द्र! हे परमेश्वर! हमें ज्ञान दे, तू हमें प्रदान दे, तू हमें सद्बुद्धि दे, तू हमें काम दे, तू हमें कामों में सबसे उत्तम काम यज्ञ दे, ऐसे जैसे कि इस संसार में एक पिता अपने पुत्रों को ज्ञान देता है, प्रज्ञा-प्रज्ञान अर्थात् प्रकृष्ट ज्ञान देता है, सद्बुद्धि देता है। वह उन्हें करने को कार्य देता है, कार्यों में भी श्रेष्ठतम् कार्य-यज्ञ यज्ञकार्य-शुभकर्म देता है ताकि वे भी अपने पिता के समान ज्ञानी बुद्धिमान् बनकर कर्म कर सकें, सत्कर्म कर सकें, यज्ञमय शुभकर्म कर सकें।

हे बहुतों से बहुत प्रकार से बार-बार बलाये जाने वाले जगदीश्वर! इस जीवन पथ में- इस गन्तव्य उत्तम धर्ममार्ग में अथवा योग में तू हमें शिक्षा दे, तू हमें प्रेरणा दे, और तू हमें ऐसी शिक्षा दे, ऐसी प्रेरणा दे कि हम जीते हुए ही, अर्थात् इस वर्तमान जीवन में ही तेरी दिव्य जोति को, तेरे अध्यात्मप्रकाश को, तेरे अमृत-आनन्द को प्राप्त कर सकें।

इन्द्र! नः क्रतु आभर, यथा पिता पुत्रेभ्य हे परमेश्वर ! तुम हमें क्रतु दो, ज्ञान दो, प्रज्ञान दों, अर्थात् प्रकृष्ट ज्ञान दो। इतना ही नहीं, हे प्रभुवर! तुम हमे ज्ञान के साथ-साथ क्रतु-काम दो और फिर क्रतु-कर्म भी देना है तो कर्मों में श्रेष्ठतम कर्म यज्ञ दो, ऐसे, जैसे कि एक पिता अपने बच्चों को पहले सद्बुद्धि देता है, फिर सत्कर्म करने की प्रेरणा करता है। बच्चा जहाँ सजग होता हैं, वहाँ उसमें जिज्ञासा उत्पन्न होती है, कुछ जानने की समझने की इच्छा पैदा होती है। ऐसे ही उसमें चिकीर्षा- कुछ न कुछ करने की इच्छा भी उत्पन्न होती है। वह इच्छा उसमें इतनी तीव्र उत्पन्न होती है कि बहुत जल्दी ही मानो वह सब कुछ जान लेना चाहता है, सब कुछ समझ लेना चाहता है, बहुत जल्दी ही वह सब कुछ कर डालना चाहता है। एक पिता जब अपने लगभग दो तीन वर्ष के बालक के समीप जाता है, तो वह बालक उससे निरन्तर प्रश्न करता रहता है। वह पूछता है- पिता जी ! यह का (क्या) है? उसके प्रथम प्रश्न का वह अभी दे नहीं पाता कि वह झट फिर पूछ बैठता है, वह का (क्या) है? पिता कहता है- बेटा ! वह चन्दा माता है। बच्चा फिर पूंछता है- पिताजी! वह नीचे क्यों नहीं आता, ऊपर क्यों रहता है? इसका पिता अभी उत्तर दे नहीं पाता कि दिन में देखा हुआ बन्दर उसे याद आ जाता है और झट वह पूछने लगता है- पिता जी ! बन्दर कपड़े क्यों नही पहनता? इत्यादि। इसी प्रकार बच्चा जहाँ पग-पग पर सब कुछ करना भी चाहता हैं। माँ जहाँ दाल, चावल आदि चुनना चाहती है, तो वह कहता है, माँ मैं भी दाल चुनूंगा, मैं भी चावल चुनूँगा। माँ जहाँ शाक काटना चाहती है

तो वह भी शाक काटना चाहता है। यदि माँ कहतीहै कि चावल बैटी चुनीगी, शाक बेटी काटेगी, तो फिर झट बच्चा कहता है, माँ जी ! फिर मैं क्या करुँगा? फिर जब माँ उसको कोई न कोई कार्य बता देती है तो इससे उसे सन्तोष होता है, अन्यथा वहअपनी दीदी के हाथ से चावल छीनता है, यह कह कर कि मैं चुनूँगा शाक और चाकु छीनता है, यह कहते हुए कि– मैं काटूँगा। पिता कुछ काम करता है, जेसे पुस्तकें सम्भालता है तो बच्चा भी कहता है– पिताजी ! मैं आपको पुस्तकें देता जाऊँगा, आप रखते जाना। बेटी कहती है– पिताजी! मैं दूँगी और आप रखते जाना। इसके अतिरिक्त भी बच्चा, आपको कुछ नही जानकारी प्राप्त करता हुआ मिलेगा और अगर उसको कुछ करने को नहीं मिलेगा तो फिर वह नल को खोलते हुए पानी को भरता और उडेलता हुआ मिलेगा, या दियासलाई की डिब्बी को खोलता और सब दियासलाईयाँ बिखेरता हुआ मिलेगा, अथवा कुछ और ही तोड़ता हुआ मिलेगा, या ईन्टों औरे ते में घर बनाता और बिगाड़ता हुआ मिलेगा, या किसी डिब्बे को खोलता और बन्द करता हुआ मिलेगा, इत्यादि। गरज़ यह है कि वह सदा कुछ न कुछ करता हुआ ही मिलेगा, माता–पिता आदि डाट–डपट कर सोने वा आराम से बैठने को बार–बार कहेंगे, परन्तु तो भी वह अपनी कर्मठता सें यही प्रदर्शित करतारहेगा, यही मानो कहता हुआ मिलेगा, अपनी मूक वाणी से, कि– माँ। सो तो मैं बहुत चुका, आराम से भी मैं बहुत बैठ चका, अब तो मुझे कुछ जानने को चाहिए, कुछ करने को चाहिए इत्यादि? उस बच्चे की ज्ञान की भूख वास्तव में सच्ची भूख होती है, उस में काम करने की तीब्र इच्छा, जो उसे बलात् प्रेरित करती रहती है क वह कोई काम ढूण्ढे और फिर उसे करने लगे। अब यदि माता पिता उसकी इस तीव्र जिज्ञासा को शान्त करते हैं और इस (चिकीर्षा) कर्म करने की तीव्र इच्छा का सुदपयोग करते हैं तो वह बच्चा सही दिशा की ओर अग्रसर होता रहता है, अन्यथा उसका भगवान् ही रक्षक है।

अब जैसे उस बच्चे को ज्ञान चाहिये, प्रज्ञान चाहिये, सद्बुद्धि चाहिये, फिर उसे कुछ करने को काम चाहिए और काम भी ऐसा चाहिये, जो श्रेष्ठ हो–शुभ हो, अर्थात् यज्ञमय कार्य हो, जिससे कि जहाँ उस का सुख–सौभाग्य बढ़ता हो वहाँ अन्यों को भी हित सम्भव होता हो। फिर वैसे ही हमें भी क्रतु–ज्ञान चाहिये, सत्कर्म चाहिये। अब जैसे उस बच्चे को यदि अच्छे माता–पिता मिल जाते हैं और वह उसको ज्ञान और सत्कर्म–यज्ञमय कर्म में प्रेरित करते हुए उसे अपने वास्तविक लक्ष्य की ओर अग्रसर करते रहते हैं तो उसका सुख–सौभाग्य बढ़ता रहात हैं, वैसे ही हम भी यही चाहते हैं इसलिए तो हमने भी प्रभु से प्रार्थना की है कि–

हे इन्द्र ! तथा पिता पुत्रेभ्यः (तथा) नः क्रतुम आभर। हे जगदीश्वर! जैसे संसार में एक में एक पिता अपनी सन्तान को क्रतु–प्रज्ञा सद्बुद्धि–अच्छे से अच्छा ज्ञान देता है, करने को क्रतु–कर्म–अच्छे से अच्छा काम देता है, और जहाँ तक भी वह समझता है उस को श्रेष्ठ से श्रेष्ठ कर्म अर्थात् यज्ञकर्म करने को कहता है, ताकि उसके माध्यम से वह पूज्य से पूज्य देवों का प्यार और आशीर्वाद पा सके, और छोटे से छोटे का मान–सम्मान पा सके, वैसे ही हे परमपिता परमेश्वर! तू हमें क्रतु–ज्ञान दे, –प्रज्ञान, दे,– बुद्धि दे, सद्बुद्धि दे–और फिर तू हमें क्रतु–कर्म–काम दे–सत्कर्म दे। कर्म से पूर्व ज्ञान–बुद्धि इसलिए माँगी कि हमारे जो भी कर्म हों, वे बुद्धिपूर्वक हों, ज्ञान पूर्वक हों, विवेक पूर्वक हों, आगा पीछा सोच–विचार कर किए गए हों। तात्पर्य यह है कि प्रभुवर! हमारा उेसा कोई भी कार्य न हो जिसके पीछे हमारी बुद्धि सजग हो कर काम न कर रही हो, और हमारा ऐसा कोई सुज्ञान न हो जो कर्म से–आचरण से विहीन हो। अर्थात् हमारे ज्ञान और कर्म दोनों साथ–साथ चलते रहें। ज्ञान यदि हमारी ज्ञानेन्द्रियों और मस्तिक को अलंकृत करे तो कर्म–सकत्कर्म हमारी कर्मेन्द्रियों का श्रृंगार बने। मस्तिष्क में ज्ञान होत तो हाथों में कर्म हो। प्रभो! यह ज्ञान और कर्म–बुद्धि और कर्म तुम हमें ऐसे स्नेह और लाड–प्यार से दो जैसे कि इस संसार में एक पिता अपनी संतान को देता है। वह उसे धीरे–धीरे बुद्धिमान् बनाकर अपने सारे घर का कार्य, व्यापार का कार्य, अर्थात् दुकान, मिल वा फैक्ट्री का सब कार्य उसे सौंप देता है। कार्यभार सौंपने पर फिर कार्य करते हुए यदि वह कहीं कुछ

त्रुटि करता है तो मध्य-मध्य में उसे वह पिता अपने अनुभव का ज्ञान दे-दे कर सजग करता रहता है, ताकि वह पूर्णतया अपने कार्य में निपुण हो जाये।

हे पुरुहूत इन्द्र ! अस्मिन् यामनि नः शिक्ष हे बहुतों से बहुत प्रकार से बार-बार पुकारे जाने वाले प्यारे परमेश्वर ! पिता जैसे अपने पुत्र को ज्ञान देकर काम देता है और फिर मध्य-मध्य में शिक्षा देते रहो-सजग करते रहो, ताकि हम (जीवाः ज्योतिः अशीमहि) जीव जीवित रहते हुए ही ज्योति (अध्यात्म प्रकाश) को प्रापत करें।

अब उस (पुरुहूत अर्थात्) बहुतों से पुकारे जाने वाले (इन्द्र) परमेश्वर के वेदज्ञान के विधान वा प्रेरणा के अनुकूल यदि हमारी प्रज्ञा और कर्म होंगे तो इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि हम अभ्युदय के साथ-साथ निःश्रेयस के भी पात्र बनेंगे, अर्थात् हमारा तब लोक और परलोक दोनों बन जायेंगे। क्योंकि जब हम लोक में बुद्धि पूर्वक सत्कर्म करेंगे तो उसका फल हमें स्वाभाविक रुप से लौकिक सुख-सौभाग्य, स्नेह-सम्मान और यह मिलेगा ही और फिर अगर हम उस बुद्धिपूर्वक किए गए सत्कर्म को भी जब निष्काम भाव से करेंगे तथा उसके परिणामस्वरूप लोक में उपलब्ध होने वाले, फल का भी जब हम त्यागपूर्वक उपभोग करेंगे तो फिर वह भोग भी हमारे बन्धन का कारण न बनकर मुक्ति का साधन बन जायेगा।

मन्त्र पर यदि गम्भीरता से हम विचार करें तो हमें उससे और भी सुन्दर प्रेरणा मिलेगी। इन्द्र! हे प्रभुदेव ! तुम हमें क्रतु दो, (क्रतु- प्रज्ञा यज्ञो वा- उणा. १.७६) तुम हमें कार्य दो, पर, कार्य दो तो वह भी यज्ञरूप कार्य ही दो। अब यह यज्ञ क्या है- देवपूजा - संगति करण और दान अपने से जो श्रेष्ठ हों, ज्ञानी हों, विद्वान. हों, तपस्वी हों, मुनि हों, महात्मा हों, संन्यासी हों, या योगी हों, उन सब का सम्मान करने की भावना हम में हो। अब उनकी पूजा, सेवा-सत्कार और मान सम्मान एवं श्रद्धापूर्वक संगति करने से हमें उन से जो स्नेह मिले, सहानुभूति मिले, ज्ञान मिले, प्रकाश मिले, आशीर्वाद मिले, उसको अपने से जो ज्ञान, आयु, अनुभव आदि से छोटे मिलें, उन्हें स्नेह-सहानुभूति पूर्वक प्रदान करते रहें। इस प्रकार यह यज्ञ भावना हमें समाज का प्रिय बना देगी। अपने से महान् पुरुषों के शरणों में जाकर झोली भरना और अपने से छोटों में में बाँट देना, यह कर्म जहाँ हमें विद्वानों के, ज्ञानियों के, ध्यानियों के, तपस्वियों के, योगियों के स्नेह, सहानुभूति एवं आशीर्वाद का पात्र बनायेगा वहाँ अपने से आयु. अनुभव एवं ज्ञान आदि से हीनों का भी मान-सम्मान एवं श्रद्धा का पात्र बनायेगा। वास्तव में यही यज्ञमय जीवन है जिसके कारण हमारी दोनों मुट्ठियों में सारा संसार होगा। एक मुट्ठी में अपने से श्रेष्ठजन, नम्रता-मान-सम्मान आदि गुणों के कारण और दूसरी में अपने से हीन जन स्नेह, दया एवं कृपा आदि के कारण। देवपूजा करते-करते, इधर हम ऊंचे से ऊंचे देवों के दर्शन पाते रहें और ज्ञानादि से हीनों एवं हीनतरों को देखते हुए उन पर कृपा करते रहें। यों चलते-चलते एक न एक दिन देवाधिदेव पुरुहूत इन्द्र के हम दर्शन पाकर उसकी पूजा में समर्पित होकर विभोर हो जायेंगे। और उसके द्वार पर विभोर होकर इतना प्यार हममें भर जायेगा कि आयु, अनुभव और ज्ञानादि से हीन, हीनतर ही नहीं, हीनतमों और यहाँ तक कि क्षुद्र से क्षुद्र प्राणी चींटी आदि तक को भी तब हम अपना प्यार बाँट सकेंगे। यही सर्वात्मभाव है। मेरा प्रभु घट घट बसे, किससे करुँ मेंबैर यह बहुत उच्च व्यवस्था है। इस प्यार का परिणाम बड़ा ही विचित्र होता है जिसको यह अपने जीवन में देखने को मिलता है वह बड़ा ही सौभाग्यशाली महापुरुष होता है। अतः हे इन्द्र ! नः क्रतुम् आभार, हे प्रभुवर ! तुम हमारे हाथों में शुभ कर्म दो-यज्ञमय उत्तम कर्म दो, ऐसा यज्ञमय कर्म कि जिससे सब का भला हो, सब का हित हो, जैसा कि इस द्रव्ययज्ञ से हाता है। इस प्रकार हमारा प्रत्येक कार्य सर्वहित की कामना से हो।

हे पुरुहूत परमेश्वर ! तुम हमें इस जीवन पथ पर पदे-पदे शिक्षा देते रहो, प्रेरणा देते रहो। वैसे तो प्रभुवर! आप प्रत्येक श्रेष्ठ कर्म पर भीतर से हमें आनन्द, उत्साह और निर्भयता तथा प्रत्येक अशुभ कर्म पर भय, शंका,

लज्जा प्रदान कर सावधान करते ही रहते हो, पर फिर भी हमारी प्रार्थना का अभिप्राय यह है कि हम भी तेरी उस अनहेतुकी कृपा के प्रति सदा सजग रहें।

यदि हमें जीवन में पग-पग पर उस पुरुहूत इन्द्र की शिक्षा मिलती रहे, प्रेरणा मिलती रहे और हम उस पर निरन्तर ध्यान देते ध्यान देते रहें तो इसमें सन्देह नहीं कि एक न एक दिन हम ज्योति-परम ज्योति-परमप्रकाश-परम आनन्द को पा जायेगंे।

हम जिसके द्वार पर खड़े हुए अलख जगा रहे हैं और जिस सें बुद्धि और कार्य मांग रहे हैं, वह कोई साधारण पुरुष नहीं है, वह कोई कंगाल पुरुष नहीं है, वह तो गत्सम्राट् है, परमैश्वर्य वाला है। संसार में किसी रहीस -धनी वा राजा के यहाँ कार्य करने पर तो केवल लौकिक ऐश्वर्य ही मिलता है परन्तु यदि उस परमैश्वर्यवान् प्राणप्रिय प्रभु के यहाँ कार्य मिल जाय तो फिर उसके द्वार से लौकिक ऐश्वर्य ही नहीं वरन् परमैश्वर्य-परमानन्दरुप धन भी मिलता है, जिसे पाकर मनुष्य सब पकार से सन्तुष्ट हो जाता है, सब तरह से परितृप्त हो जाता है।

वह पुरुहूत इन्द्र बहुतों का पूज्य है, बहुतों का ही नहीं वरन् सब का पूज्य हैं। जो आज तक उसकी पूजा नहीं रकरते वे भी जिस दिन उसके उपकारों को अनुभव करने लगेंगे, तो वे भी उस दिन अनायास ही उसके ही हो जायेंगे और उस के होकर उससे वह दिव्य प्रसाद पा जायेंगे कि उससे वह दिव्य प्रसाद पा जायेंगे कि जिसके उपरान्त उन्हें फिर कुछ प्राप्त करने को शेष नहीं रह जायेगा।

--000--

ओम परिसर दुर्ग में बोर खनन व वॉटर कूलर का लोकार्पण

आर्य प्रतिनिध सभा, मध्यप्रदेश व विदर्भ, नागपुर के स्वामीत्व भूमि पर निर्मित ओम परिसर, दुर्ग में राज्यसभा सांसद श्री मोतीलाल वोरा की सांसद निधी द्वारा, ओम परिसर व्यापारी संघ व क्षेत्र की जनता के उपयोग हेतु बोरिंग के खनन का काम पूर्ण किया गया एवं श्री शेवमल सांखला के सहयाग से वॉटर कूलर एवं प्युरीफायर का लोकार्पण क्षेत्र के लोकप्रिय विधायक श्री अरुण वोरा द्वारा किया गया. इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधी सभा के छत्तीसगढ़ क्षेत्र के प्रभारी श्री रामेश्वर प्रसाद यादव व व्यापारी संघ के पदाकिधारी भी उपस्थित थे. आर्य प्रतिनिधी-सभा, मध्यप्रदेश व विदर्भ के प्रधान पं. सत्यवीरजी शास्त्री व सभा मंत्री अशोक यादव ने सांसद व विधायकजी का धन्यवाद देते हुए ओम परिसर व्यापारी संघ को उनके प्रयत्नों के लिए आभार प्रगट किया है.

वेदों में निराकार-ईश्वरोपासना

ले०-स्वामी वेदानन्द सरस्वती
ज्ञानकेन्द्र, वेदमन्दिर कुटेटी, उत्तरकाशी

ओं तं यज्ञंबर्हिषि प्रौक्षण् पुरुषं जातमग्रतः।
तेने देवा अेयजन्त साध्या ऋषेयश्च ये।।

यजुः० ३१.९।।

पदार्थः - (तम् उस (यज्ञम्) पूजनीय (पुरुषम्) परमेश्वर को जो (अग्रतः जातम्) सृष्टि के पूर्व से ही विराजमान है (ये) जो (देवाः) ज्ञानी (साध्याः) साधक (च) और (ऋषयः) ऋषिजन थे (तेन) उन्होंने (बर्हिषि) मानस ज्ञज्ञनयज्ञ में (प्रौक्षन्) सींचकर अर्थात् धारण करके (अयजन्त) उसकी पूजा की।

भावार्थः- ज्ञानी, साधक और ऋषिगण सभी उस परमात्मा का अपने अन्तर्-हृदय में ध्यान करते हैं। ज्ञान स्वरूप उस परमात्मा की आज्ञानुसार अपने आचरण को पवित्र बनाते हैं। उस परमात्मा की आज्ञा का पालन करना ही उसकी पूजा है।

वह परमात्मा ज्ञानस्वरूप है। मानव मात्र के कल्याण के लिये वह अपने ज्ञान का वेदों के रूप में ऋद्धालु भक्तों के हृदय में प्रकाश करता है।

तस्मात् यज्ञात्सर्वहुत ऋचः समानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्मात् यजुस्तस्मादजायत।।

यजुः० ३१.७।।

अर्थात्- उस (सर्वहुतः यज्ञात्) सब का कल्याण करने वाले पूजनीय परमेश्वर से ही ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद की उत्पत्ति होती है। वही ज्ञान, विज्ञान, कर्म और उपासना का प्रकाशक है। ज्ञानहीन, अज्ञानी व्यक्ति न ही सत्कर्म कर सकता है और न उपासना कर सकता है। कर्म और उपासना से पूर्व ज्ञान की उपलब्धि अनिवार्य है। ज्ञान की उपलब्धि ध्यान से होती है।

देश-देशान्तरों के लोग गङ्गा, यमुना, गोदावरी आदि नदियों के उद्गम स्थलों की खोज में निकलते हैं। वे उन जलस्त्रोतों को देख कर प्रफुल्लित होते हैं। किन्तु ज्ञान गङ्गा का उद्गम स्थल कहां है ? यह जिज्ञासा विरले लोगों के दिलों में ही पैदा होती है। जब इस विषय पर विचार किया जाता है तो इस ज्ञानगङ्गा का उद्गम स्थल मस्तिष्क में ही मिलता है। संसार के ज्ञानी हों या अज्ञानी सभी लोग सोचने-विचारने का काम मस्तिष्क से ही लेते हैं। किन्तु मस्तिष्क तो शरीर में एक मांस का ही पिण्ड है। उसमें ज्ञान कहां से आयेगा? ज्ञान तो चेतन का गुण-धर्म है।

इस शङ्का का समाधान भी वेदों से ही होता है। अथर्ववेद का मन्त्र है-

तस्मिन् हिरण्यये कोशे त्र्यरे त्रिप्रतिष्ठिते।
तस्मिन् यद् यक्षमात्मन्वत् तद्वै ब्रह्मविदो विदुः।।

अथर्व० १०.२.३२।।

अर्थात- उस हिरण्यमय कोष में जो तीन अरों के ऊपर अवस्थित है उसी में पूजनीय जीवात्मा का निवास है। उसके अस्तित्व का ज्ञान ब्रह्मविद् व्यक्ति को ही होता है। सामान्यजन अपनी आत्मविस्मृति में ही जीवन जीते हैं। यह अज्ञानता ही जीवात्मा को जन्म-मरण के चक्र में डाले रखती है। योगाभ्यास के द्वारा जब जीवात्मा को अपने स्वरूप का ज्ञान हो जाता है तो वह जन्म-मरण के इस चक्र से बाहर हो जाता है।

ज्ञान चेतन का ही गुण होता है। जड़ पदार्थों में ज्ञान नहीं होता। आत्मा और परमात्मा दोनों चेतन हैं। दोनों का ही यह ज्ञान गुण है। उनमें भेद केवल यह है कि जीवात्मा अल्पज्ञ है और परमात्मा सर्वज्ञ है। जीवात्मा एकदेशी है तो परमात्मा सर्वव्यापक है। जीवात्मा व्याप्य है तो परमात्मा सर्वव्यापक है। मस्तिष्क की हृदय गुहा में जो जीवात्मा विराजमान है उसमें सर्वज्ञ, सर्वव्यापक परमात्मा का भी आवास है। वहीं से यह ज्ञानगङ्गा निःसृत हो रही है। जो व्यक्ति जितना एकाग्रचित्त होकर उस परमात्मा की भक्ति में निमग्न होता है वह उतना ही अधिकाधिक ज्ञान ज्योति से प्रकाशित हो उठता है। परमात्मा अपने ज्ञान को पहाड़-पत्थरों में यूं ही नहीं फेंक देता। वह उस ज्ञानरूपी अनमोल धन को सत्पात्रों को ही प्रदान करता है। योगनिष्ठ तपस्वी आत्मा ही उस ज्ञान को प्राप्त करती हैं। ज्ञान सम्पन्न होकर जीवात्मा अपने मन, बुद्धि, शरीर, इन्द्रियों के द्वारा उस ज्ञान को कर्म रूप में अवतरित करता है। उत्तम ज्ञान से उत्तम कर्म निष्पन्न होते हैं। जब ज्ञान और कर्म ये दोनों ही व्यक्ति के पवित्रतम हो जाते हैं तो व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन ही यज्ञमय हो जाता है। ज्ञान ज्योति के प्रकाश में जीवात्मा अपने स्वरूप का प्रत्यक्ष करता है तथा शरीर, मन, बुद्धि से जो कर्म करता है वे सब निष्काम भाव से ही पूरे करता है। निष्काम कर्म बन्धन का कारण नहीं होते। याज्ञिक भावना से किये गये निष्काम कर्म ईश्वर की पूजा में समर्पित कर दिये जाते हैं तो यही ईश्वर उपासना का सर्वोत्तम रूप है।

यजुर्वेद का मन्त्र इसी उपासना पर प्रकाश डाल रहा है-

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नांक महिमानःस सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।

यजुः० ३१.१६।।

पदार्थः- (देवाः) ज्ञानी विद्वान् लोग (यज्ञेन) अपने जीवन यज्ञ से (यज्ञम्) उस पूजनीय यज्ञस्वरूप परमात्मा की (अयजन्त) पूजा करते हैं। उसकी पूजा के (तानि धर्माणि) वे धर्म-कृत्य ही (प्रथमानि) प्रधानतम साधन (आसन्) हैं। उसी पूजा से (पूर्वे) पूर्वकाल के (साध्याः) साधक लोग और (देवाः) ज्ञानी विद्वान् लोग (यत्र) जहां अमृत सुख भोगते हुए (सन्ति) विराजमान हैं, वहीं अपने जीवन को यज्ञमय बनाने वाले धीर पुरुष भी (महिमानः) महानता को प्राप्त करते हुए (ते) वे भी (ह) निश्चय से (नाकम्) मोक्ष के आनन्द को (सचन्त) प्राप्त करते हैं। यज्ञ ही ईश्वरपूजा का श्रेष्ठतम उपाय है।

यह यज्ञ क्या है? इसको वेद के ही शब्दों में सुनिये-

व्रतेन दीक्षामाप्रोति दीक्षयाप्रोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्रोति श्रद्धया सत्यमाप्यते।।
एतावद्रूपं यज्ञस्य यद्देवैर्ब्रह्मणा कृतम्।
तदेतत्सर्वमाप्रोति यज्ञे सौत्रामणी सुते।।

यजुः० १९.३१।।

भावार्थः- परमात्मा सत्य स्वरूप है। उस सत्य स्वरूप परमात्मा का साक्षात्कार करना साधक व्यक्ति का जीवन लक्ष्य होता है। इस जीवन लक्ष्य को पाने के लिये साधक व्यक्ति को चार सीढ़ियां पार करनी पड़ती हैं। उन में प्रथम सीढ़ी है, सत्य की प्राप्ति और अनृत के त्याग का व्रत लेना, ऐसी प्रतिज्ञा करना कि मैं मरूं चाहे जीऊं, सत्य को प्राप्त करके ही रहूंगा। यह प्रतिज्ञा ही व्रत है इससे अगला कदम जीवन में यम-नियमों का पालन करना है। मन, वचन, कर्म से सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय ईश्वर-प्रणिधान का पूर्णरूपेण ालन करना, माता, पिता, गुरु, अतिथि, विद्वत्जनों की सेवाशुश्रूषा यह सब दीक्षा रूप है। इनका पालन करने वाले व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, आत्मिक उन्नति होती है। जन समाज की सेवा का भी वह पात्र बन जाता

है। यही उसकी दक्षिणा है। इस दक्षिणा को पाकर उसके मन में सत्य धर्म के प्रति और श्रद्धा बढ़ जाती है। अन्ततः वह श्रद्धा सत्य स्वरूप परमात्मा की प्राप्ति का साधन बन जाती है। जिस जीवन में व्रत, दीक्षा, दक्षिणा, श्रद्धा और सत्य अवतरित हो जाते हैं, वह जीवन यज्ञमय हो जाता है। यही ज्ञान का यज्ञ का वास्तविक स्वरूप है। इसी में जीवन की सार्थकता है। यही ईश्वर पूजा का सर्वोत्तम उपाय है। दूसरे सब उपाय व्यक्ति को भटकाने वाले हैं। उत्तम ज्ञान व उत्तम कर्म सब प्रभु चरणों में अर्पित कर देना ही उसकी सेवा है। यह यज्ञरूप प्रभु की जीवनयत्र द्वारा पूजा का सर्वोत्तम उपाय है।

--00000--

आर्य समाज मंदिर – वर्धा के चुनाव संम्पन्न

आर्य प्रतिनिधी सभा, मध्यप्रदेश व विदर्भ के प्रधान श्रीमान सत्यविरजी शास्त्री की अध्यक्षता में वर्धा आर्य समाज आराधना मंदीर के चुनाव लिये गये। उसमें सर्व सम्मत्ति से श्री. शैलेन्द्रजी दप्तरी को प्रधान चुना गया और शैलेन्द्रजी दप्तरी, बाकी पदाधिकारी और सदस्यों का चुनाव किया वह नीचे लिखे मुताबिक है।

१) उपप्रधान – सुभाष राठी
२) मंत्री – ताराचंद्रजी चौबे
३) कोषाध्यक्ष – प्रविणनकुमार पाटणी
४) उपप्रधान – डॉ. राजेंद्र पुनसे
५) सहमंत्री – १) छगनलाल बत्रा
२) नरेंद्र डोकवाल
३) भनीष जालानी
६) सदस्य – पुखराज पचारीया
७) सदस्य – सुरेश नारे
८) सदस्य – विनोद व्यास
९) सदस्य – कृष्णकांत चौबे
१०) सदस्य – अशोक अग्रवाल
११) सदस्य – संजय ओझा
१२) आमंत्रित सदस्य – किशोर पंचसरा
१३) मनिष जालान
१४) महेश पोद्दार
१५) राजेंद्र सोनी

गुरुकुल – शिक्षा के उत्तम श्रोत

डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह
चन्द्रलोक कालोनी, खुरजा.

आज भारत में गुरुकुलों की संख्या में वृद्धि हो रही है । प्राचीन काल में यही गुरुकुल विश्व भर के लोगों के लिये शिक्षा के केन्द्र थे। नालन्दा, तक्षशिला के नाम से आज भी विश्वविद्यालयों को जाना जाता है। विदेशी छात्र यहां शिक्षा प्राप्त करने आते थे।

हरियाणा, उत्तरप्रदेश, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, उत्तराखण्ड, केरल, कर्नाटक, उड़ीसा, गुजरात आदि समस्त प्रदेशों में गुरुकुल वेद ज्ञान की शिक्षा का प्रकाश कर रहे हैं।

अंग्रेजी शासन में लार्ड मैकाले ने अंग्रेजी स्कूल खोल अंग्रेजी विदेशी संस्कृति की नींव रख दी थी। जिसकी पद्धति पर आज कान्वेण्ट स्कूलों की देश में परभमार हो रही है। मैकाले का ही कार्य १९४८ में स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात आनेवाली सरकारों ने भी किया। अंग्रेजों की भांति प्रत्येक संस्थान, विभागों में अंग्रेजी भाषा को ही महत्व दिया गया, जब कि भारत के ग्रामीण क्षेत्रों के निवासी जो देश की ८० प्रतिशत जनता थी। अंग्रेजी नहीं जानती थी, परन्तु जब अंग्रेजी में ही कार्य होते रहे तो मजबूरन लोगों को अपने बच्चों को कान्वैण्ट स्कूलों में भेजना पड़ा। आज भी लोग अंग्रेजी का सर्वत्र प्रयोग होने पर अंग्रेजी की ओर ही भाग रहे हैं। हालांकि पाश्चात्य संस्कृति के पोषक इंग्लिश मीडियम स्कूलों में हैलो टाटा बाय बाय के अतिरिक्त कोई श्रेष्ठ आचरण या संस्कार व शिक्षा नहीं है। अंग्रेजी बोलने का ही महत्व इनमें है। अंग्रेजी कल्चर में पढ़े व पले बच्चे आज सर्वाधिक मादकता के अंधेरे कूंऐं में जैसे जा रहे हैं, क्यों कि पाश्चात्यता में मद्यपान, धूम्रपान, पार्लर, बार, काकटेल पार्टी, बर्थ डे पार्टी, तेज म्यूजिक पर डांस करना, अर्धनग्नता, विदेशी फूहड़, संगीत, डी.जे. पर थिरकना, यही ग्रहण कर पाते हैं। ब्याय फ्रैण्ड, गर्ल फ्रैण्ड बनाने को महत्व दिया जाता है। आज अनेक महानगरों के विश्वविद्यालय व महाविद्यालय के छात्र यही समझते है कि, पाश्चात्य संस्कृति ही उनका जीवन है। शिक्षा से अधिक वह सिगरेट, मद्यपान तथा नशीली ड्रग्स के सेवन में अधिकतर फंस जाते है। बार आदि में पार्को में छात्र छात्राओं के जोड़े हाथ मे हाथ पकड़े अठखेलियां करते मिल जाऐंगे। यह पाश्चात्य शिक्षा का प्रचार प्रसार में काले की पद्धति वाले स्कूल ही कर रहे हैं। जहां अध्यापक भी पाश्चात्यता के रंग मे रंगे हों तो विद्यार्थियों को शिक्षा भी वैसी ही देंगे। भारतीय संस्कृति में ऐसे विद्यार्थियों व शिक्षकों के लिये बताया है जैसे कि–

आलस्य मद मो हौ च चापलं गोष्ठि रेव च।
स्तब्धता चामिमानित्वं तथा ऽत्यागित्वमेव च।
एते वै सप्त दोषाः स्युः सदा विद्यार्थिनां मता।।१।।
सुार्थिनः कुतोविद्यार्थिनः सुखम्।
सुखार्थी वा व्यजेद्विद्यां विद्यार्थी वा व्यजेत्सुखम।।२।।

(आलस्य) शरीर और बुद्धि में जड़ता, नशा, मोह, किसी वस्तु में फसावट, चपलता और इधर–उधर की व्यर्थ कथा करना सुनना, पढ़ते पढ़ाते रूक जाना, अभिमानी, अत्यागी होना। ये सात दोष विद्यार्थियों में होते हैं। जो ऐस हैं उनको विद्या कभी नहीं आती।।१।।

सुख भोगने वाले को विद्या कहां ? और विद्या पढ़ने वाले को सुख कहां ? क्यों कि विषय सुखार्थी विद्याको और विद्यार्थी विषय सुख को छोड़ दे।।२।। ऐसे किये बिना विद्या कभी नहीं आती।

– स0प्र0 चतुर्थ सम.

आज के विद्यार्थी में वह शिक्षा नहीं जो गुरुकुलों में मिलती थी। वहां सत्याचरण की शिक्षा मिलती थी। उन्हें जितेन्द्रिय बनाया जाता था। इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण होता था। विषय विकारों में नहीं फंसते थे। कामुकता, फूहड़ता, अर्धनग्नता से दूर रहते थे। पूरी तरह से ब्रह्मचर्य का पालन करते थे। ऐसे ही अध्यापक शिक्षा देते थे। विद्यार्थी जिससे सत्य बोलनेवाले बनें। सभ्य, जितेन्द्रिय बनें। सत्याचारी आत्मबल जिनका बढ़े, शरीर से भी बलवान साथ में विद्वान भी हों। विद्यार्थी आलसी न हों ईर्ष्या लोभ मोह आदि से दूर हो। शान्त विचार शील व पढ़नेवाले परिश्रमी हों। पुरूषार्थ करनेवाले हों। यही नहीं विद्यार्थी के साथ अध्यापक भी श्रेष्ठ गुणवाले सदाचारी जितेन्द्रिय विद्यावान गुणवान होते थे।

गुरूकुल की शिक्षा के स्थान पर आज के पाश्चात्य सांस्कृति के पोषक मैकाले की पद्धति का पालन करने वाले अध्यापक व स्कूल श्रेष्ठ आचराणवाले विद्यार्थी नहीं बना सकते। वहां भारतीय संस्कृति के विपरीत केवल भौतिक चमक दमक में जीवन ज्ञापन करनेवाले मद्य मांसाहार को महत्व देनेवाले हय हैलो वाले ही बन कर निकलते है।

आज छात्र में चपलता अर्थात छात्र प्रपंच जैसे गुणों का समावेश हो रहा है। माता पिता के वृद्धों के पैर स्पर्श करने में वह पीछे हैं। नमस्ते करने में भी उन्हें संकोच होता है। हाथ मिलाना भारतीय संस्कृति नहीं। आज हाथ मिलाने की प्रथा पूरे भारत वर्ष में फैली हुयी है। उससे एक दूसरे के हाथों में यदि कोई त्वचा रोग है। फंगल या एलर्जी हो अथवा वायरल व बैक्टीरियल इन्फैक्शन भी हो तो एक दूसरे को लग सकताहै। दूसरे नमस्ते हृदय व मन से समर्पण है, जहां एक दूसरे का सम्मान इसी से होता है। एक दो से वा सहस्त्रों से एक बार हाथ जोड़कर अभिवादन करना सरल प्रक्रिया है। जो कान्वैण्ट या मैकाले की शिक्षा से बाहर है।

आज महानगरों के आधुनिक विद्यालयों में अधिकांश विद्यार्थियों मे मादकता का प्रभाव बढ़ रहा है। वह हेरोइन व अन्य मादक ड्रग्सका सेवन भी करते। होटल, बार, मद्यशाला आदि में भी जाते हैं। जो विषय सुखो में लगे हों वह उच्छे विद्यार्थी कैसे बन सकते हैं। विद्यार्थियों में मादकता कामुकता आलस्य अभिमान तो होना ही नहीं चाहिये।

गुरूकुल में विद्यार्थी को मानवता के गुणों की शिक्षा दी जाती है। संस्कारों में ढाला जाता है। वह आलसी निकम्मा न हो। निन्दा स्तुति में कभी हर्ष व शोक न करे। सदैव धर्म पर चले । अधर्म से दूर रहे। ईश्वर वेद व सत्याचार को मानने वाला हो। विचार शील हो, परोपकारी हो, आपातकाल में मोह को प्राप्त न हो। प्राप्ति के अयोग्य की ईच्छा कभी न करें। जिसकी वाणी सब विद्याओं और प्रश्नोंत्तरों के करने में अति निपुण हो।

गुरुकुलों मे चारों वेद, चारों ब्राह्मण ग्रन्थ ऐतरेय शतापथ सामा और गोपथ तथा शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निघण्टु, निरूक्त, हन्द, ज्योतिष, मीमांसादि हट्ट शास्त्र वेदों के उपाय, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद, अर्थवेद आदि प्रमाान ज्ञानविज्ञान के विषय होते हैं। जिसमें परमात्मा जीवात्मा प्रकृति व मानव जीवन से सम्बन्धित ज्ञान व भौतिक रसायन चिकित्सा परमार्णनकी अर्थ शास्त्र, समाजशास्त्र, युद्ध विज्ञान, गायन–वादन, वनस्पति, कृषि, भूगोल, ग्रह, तारे नक्षत्र व सूर्य व ऊर्जा के समस्त विषय हैं और आज जो विज्ञान का विकास दिखायी दे रहा है, जितने भी सुख सुविधा के साधन यन्त्र आदि हैं। उनका भी बीज रूप में ज्ञान है।

मुख्य बात यह है कि, गुरुकुल में मानव का निर्माण होता है। जीवन का मिमीज किया जाता है। श्रेष्ठता व सद्गुणों का संचार किया जाता है। जब समाज में श्रेष्ठ व्यक्ति होंगे तभी तो श्रेष्ठ समाज बनेगा और श्रेष्ठ समाज से श्रेष्ठ राष्ट्र का निर्माण होगा। राष्ट्र उन्नति के मार्ग पर चलेगा ऐसे राष्ट्र व समाज में न कोई व्यभिचारी होगा न ही कोई मद्यपानी व धूम पानी होगा। सदाचारी विद्वान व्यक्ति होंगे। जिनका भोजन व जीवन सात्विक होगा। वाणी में मधुरता

होगी। सत्य वद धर्मंचर का पालन होगा। गुरुकुल से आए बालक बलवान व विद्वान कर्त्तव्य निष्ठ होंगे। देश व समाज के लिये समर्पित होंगे। आज जहां नई पीढ़ी मुँह में गुटखा तम्बाकू भरकर खाते चूषते व स्थान को गन्दा करते हैं। बिना अपशब्दों के बात नहीं करते, चरण स्पर्ध तो दूर वृद्धों को किसी को नमस्ते करने में अपमान समझते है और यहां तक कि वह भौतिक चमक दमक को ही महत्व देते हैं। ऐसी सन्तान परिवारों व समाज के नाम पर धब्बा हैं। इससे व इन लोगों से दुराचार से समाज अवनति की ओर ही जाता है। राष्ट्र में पदों पर प्रतिष्ठित हो यही लोग घोटाले भ्रष्टाचार आदि करते हैं।

यदि व्यक्ति परिवार समाज व राष्ट्र की उन्नति करनी है, तो सरकार व समाज को गुरूकुल शिक्षा पद्धति को महत्व देना होगा, जहां वेदादि शास्त्र व आधुनिक विषय जो वेद वेदांग उपाड़ा विषयों से ही मिलते है। पढ़ना व पढ़ाना होगा।

--000--

करो भारत से ही अनुराग

भारत की निज शान जगा दो।
शुभ संस्कृति की जान जगा दो।
निज संतति में गान जगा दो।
कूट कूट कर भर दो उनमें देश प्रेम अनुराग।
करो भारत से ही अनुराग।।१।।

इंग्लिश को रट क्या करलोगें?
अरबी को पढ़ क्या भरलोंगे?
भूखे द्वार द्वार भटकोंगे।
आर्य-संस्कृति से न करोगे।
यदि दृढ़तम अनुराग।।२।।

जो संसृति (संसार) का पूज्य गुरु है।
नर-निर्माता मान्य अरु (और) है।
ये भू पारस अन्य मरु (रेगिस्तान) है।
निश्चय होंगे पतित सर्वथा।
जो न करो अनुराग।
करो भारत से ही अनुराग।।३।।

वेद-सूर्य से उषा उदित है।
श्रौत धर्म से आर्य मुदित है।
जिसमें मानव हित निहित है।
इस संस्कृति के अलिंद (भ्रमर) बनकर
सूंघोपुष्प पराग।
करो भारत से ही अनुराग।।४।।

विद्यासागर शास्त्री
सुराज कॉलनी, प्लॉट नं. ४, अमरावती.

उठो उठो भारत की आशा

नव्य सूर्य की दिव्य प्रभा से,
दिव्य ज्ञान की ज्योति जलाते।
जन जन को तुम सबल बनाते,
जागृत उन में प्राण भरो।।

उठो उठो भारत की आशा
भारत का नव निर्माण करो,
उठो हिन्द की भावी आशा,
सबल करों में ध्वज लहराते।
मुख से जय जय भारत गाते
जन जन में तुम प्रेम जगाते,
नवल क्रान्ति का बिगुल बजाते,
जागृत क्रान्ति गान करो।
उठो उठो भारत की आशा
भारत का नव निर्माण करो।।

रणभेरी का नाद बजाते,
शहीदों की तुम याद दिलाते।
उनके समजोश जगाते,
देश हेतु सर्वस्व लुटाते।।

शहीद रक्त की शपथ दिलाते
जागृत अपनी शान करो।
उठो उठो भारत की आशा
भारत का नव निर्माण करो।
प्रातः प्रभा उत्साह लिए
भारत में नव प्राण भरो।
भारत का नव निर्माण करो
उठो उठो भारत की आशा....

लेखक - **विद्यासागर शास्त्री (गणगणे)**

वेद, हम और हमारी मानसिकता

डॉ. बिजेन्द्रपाल सिंह
चन्द्रलोक कालोनी, खुरजा

यह निश्चित है कि, वेद ईश्वर क्रत हैं। क्योंकि जैसा कि ईश्वर पवित्र है। सर्वविद्यावित है। शुद्ध गुण कर्म स्वभाव वाला, न्यायकारी व दयालु है, वैसा ही वेद ज्ञान है। वेद ज्ञान पक्षपात रहित है। उसमें मानवता है। जैसे एक पिता के लिये अपनी सन्तान होती है। उनमे वह भेद नहीं करता पक्षपात नहीं करता। सबको समान रुप से पालता है। समान रूप से न्याय करता व कर्मानुसार फल को देनेवाला है। वेद में ईश्वर के गुणकर्म स्वभाव के जैसा ही ज्ञान है। इसलिये यह ईश्वरकृत है। वेद में कही भी किसी के साथ पक्षपात नहीं है। हमें वेदानुकूल आचरण करना चाहिये। प्राचीन काल में वेदाचराज ही होता था और यदि वेद विरुद्ध कुछ भूल से भी हो जाता था। वे लोग उसका स्वयं प्रायश्चित करते थे। यह हमारे इतिहास से विदित है। यह वेदज्ञान परिवारों में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक अनवरत रूप से नदी के जल की भांति प्रवाहित होता आया है। आज भी हम देखते हैं कि जो पुराने व्रद्धजन थे या हैं वह अच्छी बातें बताते हैं। श्रेष्ठता की बातें बताते हैं, वह वेद की ही आते हैं।

आज के समय में जो चारों ओर भय व आतंक बना हुआ है। लूट, चोरी, बलात्कार, अपहरण, हत्याऐं आदि हो रहे हैं। वह वेद के न जानने व आचरण न करने से है।। समाज में उस अवरिल वेद ज्ञान के प्रवाह में कभी आ चुकी है। पहले वेद ज्ञान का प्रवाह था। इतने अपराध न होते थे। आदमी अपराध करने से डरता था। उसे पता था, बुरे कर्म का फल बुरा ही होगा, वह बुरे कर्मों से दूर रहते थे।

हमारा समाज श्रेष्ठ था, संस्कृति व संस्कारों को जानते व आचरण करते थे। भले ही विद्यालय की शिक्षा प्राप्त न हो परन्तु ईश्वरीय गुणों को मानते थे। एक दूसरे से प्रेम था। सबका हित चाहते थे, सम्मान करते थे। सत्याचरण था। बड़ों व्रद्धजनों की सेवा करते थे। सात्विक भोजन करते थे, जीवन अत्यन्त सादा होता था, परन्तु वाणी में सत्य होता था, धर्माचरण करते थे।

परमात्मा ने वेद ज्ञान इसीलिये तो दिया जिमसें हम अवद्या पाखण्ड आदि बुराइयों से दूर रहे। जैसे माता पिता अपने सन्तानों पर कृपा द्रष्टि कर उन्नति चाहते हैं। वैसे ही परमात्मा ने सब मनुष्यों पर कृपा करके वेदों को प्रकाशित किया है। जिससे मनुष्य अविद्यान्धकार भ्रम जाल से छूटकर विद्या विज्ञानरूप सूर्य को प्राप्त हो कर अत्यानन्द मे रहें और विद्या तथा सुखों की वृद्धि करते जाये।
– स0प्र0 सप्तम समु0

अब क्यों कि वेद ज्ञान से हम दूर जा रहे हैं, इसलिये ही परिवार व समाज में अज्ञानता का अन्धकार छाया है और ईर्ष्या वैमन्स्य लोभ व मोह कामुकता अर्थात् इन्द्रियों द्वारा अपने अपने विषयों मे फंस कर दुष्कर्मों की ओर बढ़ रहे है। आज आदमी चाहता है कि, मेरे पास अथाह धनसम्पत्ति हो जाए। भौतिक वाद में धिरे जन धनी व्यक्ति को ही सम्मान देते है, परन्तु वह सोचते नहीं कि धरती पर एक से बढ़ कर एक धनी हुए परन्तु कुछ साथ नहीं लें गये।

आज उनकी सन्तानें गलियारों मे घूम रही है। हस्तिनापुर का भव्य प्रासाद था। किले के नीचे से सात अक्षोहिणी सेना ढोल व वाद्यों के साथ निकला करती थी। आज वहां खण्डहर मात्र हैं। ऊँचे टीले हैं। पूरा क्षेत्र कंटीली झाड़ियों से घिरा है। जंगली जीव वहां विचरण करते है। बड़े बड़े चक्रवर्ती शासक हुए उनके महल राजमहल थे। आज वहां केवल खण्डहर हैं। आज वह ऊँच्चे स्वर्ण जड़ित महल केवल स्वप्नों की बातें रह गयी हैं। परन्तु एक बात हैं कि,

जो महान पुरूष थे उन्हें आज भी याद किया जाता है। उन्होंने देश व समाज के लिये अपना जीवन समर्पित कर दिया। महाराजा मन, चाणक्य चन्द्रगुप्त मौर्य, शिवाजी महाराज, प्रताप जोरावर सिंह बारहठ, भगतसिंह, बिस्मिल को कौन नहीं जानता। दुनिया याद करती है। सदकर्मों को याद किया जाता है। यही श्रेष्ठ कर्म ईश्वरीय हैं, यही मान का धर्म है और कहते हैं। धर्म ही साथ जाता है। धर्म को ही सब याद करते हैं आज उनका नाम है।

आज का मनुष्य धर्म के लिये नहीं जीता अपितु धन के लिये जीता है। कहीं धन व धर्म दो वस्तुएँ हों तो वह धन को महत्व देगा, धर्म को नहीं। पहले लोग धर्म के कार्य किया करते थे। पानी के लिये प्याऊ लगवाया करते थे। यात्रियों के ठहरने के लियें धर्मशालाऐं बनवाते थे। निर्धन कन्याओं का विाह कराते थे। अकाल व सूखा ग्रस्त क्षेत्रों में हर प्रकार की यथा सम्भव सहायता करते थे। पीड़ितों की सहायता करते थे। अनाथ बालकों की सहायता करते उनका पालन पोषण भी करते थे।

आज ऐसी स्थिति नहीं आज विपरीत स्थिति है। आज पीड़ित की सहायता करनेवाले कम मिलेंगे। खड़े होकर देखनेवाले अधिक। एक और विचित्र बात है, यदि कोई नदी में छूब रहा है, तो उसे बचाने का प्रयत्न न कर मोबाईल में वीडियो अवश्य बनाऐंगे या कहीं आग लग गयी होत तो पानी से बुझाने के स्थान पर उसे मोबाईल में अवश्य कैद करेंगे। यदि कहीं दुर्घटना हो गयी हो तो वहां पीड़ितों की सहायता न कर फोटो खींचने पर पूरी मेहनत करेंगे । यह स्थिति है आज के नौजवानों की, अब सहायता कम मनोरंजन अधिक करते हैं।

यदि आज भी हम ईश्वर को सत्य रुपेण मान लें तो धरती से पाप व दुख दूर हो जाऐं । मानवता का संचार हो जाय कहीं कोई लूट बलात्कार हत्या लड़ाई झगड़ा ही न हो। अतः ईश्वर को मानना व जानना उसके बताए मार्ग पर आचरण करना आदि आवश्यक है।

---000---

– शोक सभा –

ॲड. अरूणराव पुरेकर

निधन : दिनांक ६ जून २०१७

वर्धा के ख्यातिनाम विधितज्ञ तथा आर्य समाज आराधना मंदिर, वर्धा के प्रधान ॲड. अरूणराव पुरेकर इनका दिनांक ६ जून २०१७ को दुःखद निधन हुआ। आप वर्धा के श्री साई मंदिर, श्री महादेव मंदिर, श्री राम मंदिर, श्री बालाजी मंदिर, पुलगाव तथा केसरीमल ज्ञान पीठ के अध्यक्ष पद पर विराजमान थे। आपके निधन से संपूर्ण वर्धा शहर में शोक की लहर है।

परमेश्वर दिवंगत आत्मा को तथा उनके परिवार पर हुए आघात को सहन करने की शक्ती प्रदान करे। इस हेतु शोक सभा रखी गयी, जिसमे श्री ताराचंद चौबे, शैलेंद्र दप्तरी, प्रविण पाटणी (सी.ए.), सुभाष राठी, डॉ. राजेंद्र पुनसे, नरेंद्र डोकवाल, छगन बत्रा, अशोक अग्रवाल, पुखराज पंचारीया, महेश पोद्दार, सुरेश नारे, विनोद व्यास, कृष्णकांत चौबे, मनिषा जालान उपस्थित थे।

आर्य समाज हंसापुरी मे मृत आत्मा कीशांति के लिए पं. कृष्णकुमार शास्त्री, सभा मंत्री अशोक यादव, कार्य प्रधान प्रा. अनिल शर्मा द्वारा शांन्ति यज्ञ संपन्न किया गया।

नकली भगवान्

किसी भी चित्र को देखकर उसे पहचान लेते हैं, तो यह कलाकार की सफलता है। यदि हम एक चित्र को देखें, उसे कोई दूसरे नाम से पुकारे और किसी अन्य चित्र को किसी और नाम से, तो निश्चय ही नाम और आकृति की भिन्नता से वे दोनों चित्र दो भिन्न व्यक्तियों के होंगे। हम मन्दिर में राम की मूर्त्ति को देखकर उसे भगवान् की मूर्ति नहीं कहते, उसे हम भगवान् राम की मूर्ति कहते हैं। हनुमान् की मूर्ति को भगवान् नहीं कहते, भगवान् हनुमान् कहते हैं। भगवान् विशेषण है, राम, हनुमान् नाम है। अतः मूर्तियाँ भगवान् की नहीं हैं, भिन्न-भिन्न व्यक्तियों की हैं। राम और हनुमान् की। भगवान् की मूर्ति होती तो दो नाम और भिन्न आकृतियाँ नहीं होती और एक मन्दिर में अनेक प्रकार की मूर्तियों की आवश्यकता भी नहीं होती। हर व्यक्ति किसी विशेष आकृति का उपासक है। अतः सभी को संतुष्ट करने के लिए सभी आकृतियों को भगवान् के रूप में स्थापित कर लिया जाता है।

सबसे विचित्र बात है- भगवान् को भोग लगाना। हम पूजा करते हुए यह मानते हैं कि भगवान् खाता है, पीता है। आजतक मनुष्य तो क्या, पशु-पक्षी भी बिना मुख खोले नहीं खा सकते। एक माँ अपने तत्काल उत्पन्न हुए शिशु को भी बिना मुख खोले अपना दूध नहीं पिता सकती, फिर हम हजारों वर्षों से भगवान् को भोग लगाने के नाम पर खिलाने का अभिनय करते हैं और उसे सत्य मानते हैं। घर आये अतिथि को खिलाने में, घर में पाले पशु, गाय, कुत्ते आदि प्राणियों को खिलाने में कष्ट होता है, परन्तु भगवान् को जीवनभर खिलाते हैं और खिलाने की सन्तुष्टि का अनुभव करते हैं, क्योंकि वह खाता ही नहीं। मन्दिर में जाकर भगवान् से माँगते हैं, परन्तु भगवान को अपने घर पधारने का निमन्त्रण नहीं देते, क्योंकि वह जड़ है, चल-फिर नहीं सकता।

जो सदा रहता है, वह कभी नहीं रहा, ऐसा नहीं हो सकता, परन्तु जड़ वस्तुओं से बनाया भगवान् आज होता है, कल नहीं होता। गणेश जी, देवी-देवताओं की प्रतिमायें गणेश चतुर्थी या दुर्गा-पूजा पर हजारों नहीं, लाखों की संख्या में कूड़े-कचरे से बनाई जाती हैं, उनको पण्डाल में सजाया जाता है, उनकी पूजा आरती की जाती है, भोग लगाया जाता है, उनसे प्राथनाएँ की जाती हैं, नमस्कार किया जाता है और अगले दिन कचरे के ढ़ेर पर फेंक दिया जाता है। इस प्रकार कचरे से बना भगवान्, वापस कचरे में चला जाता है। यदि जड़ वस्तु को आप भगवान् मानते हैं तो मूर्ति बनने से पहले भी कचरा भगवान् था और वापस कचरे में फेंकने के बाद भी भगवान् ही रहेगा, परन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं होता, अतः जड़ वस्तु भगवान् नहीं है। आप उसे कुछ समय के लिए भगवान् मान लेते हैं। इसीलिए गणेश विसर्जन के पश्चात् समुद्र में फेंके गये चित्रों के नीचे लिखा था- कचरे का भगवान् कचरे में।

कभी कोई बात लाख उक्ति, प्रमाणों से नहीं समझाई जा सकती, वह घटना से एक बार में समझ में आ जाती है। एक बार दिल्ली में वेद मन्दिर में स्वामी जगदीश्वरानन्द जी के निवास पर एक परिवार उनसे भेंट करने आया, परिवार दिल्ली का ही रहने वाला था। पति-पत्नी दोनों केदारनाथ की यात्रा करके लौटे थे। सब कुशलक्षेम की बातें होने के बाद अपनी यात्रा का वृत्तान्त सुनाते हुए एक रोचक घटना सुनाई, जो बहुत शिक्षाप्रद है-

केदारनाथ मन्दिर में प्रातःकाल वे दोनों दर्शन के लिए गये। भीड़ बहुत थी, पंक्ति में खड़े थे, उनके पीछे एक वृद्ध राजस्थान से भगवान् के दर्शन के लिये आ था, सह भी पंक्ति में चल रहा था। उन्होंने बताया मन्दिर में पहुँचे मूर्ति के दर्शन करके आगे बढ़ रहे थे, पीछे के वृद्ध व्यक्ति ने दर्शन करते हुए वहाँ खड़े पुजारी से प्रार्थना की- पुजारी जी, बहुत वर्षों से भगवान् के दर्शनों की इच्छा थी, बड़ी दूर से चलकर आया हूँ। थोड़ी देर खड़े रहने दीजिए, जिससे भगवान् के भली प्रकार दर्शन कर सकूँ, यह सुनकर पुजारी झल्लाया और उस वृद्ध को आगे की ओर धक्का देते हुए बोलो- तुझे दो मिनट में भगवान् क्या देगा? मैं यहाँ बत्तीस साल से खड़ा हूँ, मुझे आज तक कुछ नहीं दिया। चलो, आगे बढ़ो। यह है भगवान् की वास्तविकता। यदि कोई भी भगवान् प्रभावशाली होते तो पुजारी, पादरी, ग्रन्थी, मुल्ला, मनुष्य समाज में आदर्श जीवन के धनी होते, परन्तु पाप सम्भवतः सामान्य भोगों की अपेक्षा इनके पास अधिक है, क्योंकि ये भगवान् से डरते नहीं, उन्हें वास्तविकता का पता है।

योगदर्शन में ईश्वर की पहचान बताते हुए महर्षि पतञ्जलि ने लिखा-

क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः।।

- धर्मवीर

१११वीं जयन्ती : २३ जुलाई २०१७ पर विशेष

आर्यावर्त का वह आर्यवीर–चन्द्रशेखर आजाद जिसके सिंह पराक्रम से ही काँपती थी अंग्रेज सरकार

–प्रियवीर हेमाइन

वसुमति वसुन्धरा धरती माता आदिकाल से ही अनेक नररत्नों को अपने गर्भ में रखती चली आयी है, इसीलिए इसी बारे में संस्कृत साहित्य में लिखा है–

दाने तपसि शौर्ये च विज्ञाने विनये नये।

विस्मयो न हि कर्त्तव्या बहुरला वसुन्धरा।।

दान में, तपस्या में, शौर्य में, विज्ञान में, विनम्रता में और नीति में आश्चर्य नहीं करना चाहिए, क्योंकि यह वसुन्धरा एक नहीं, अनेक–अनेक रत्नों वाली है।

सन् १९२१ के ये वे ही दिन थे जब पूरे ही देश में अंग्रेजी साम्राज्य के विरुद्ध एक लहर सी दौड़ रही थी। देश की तरुणाई भी लुटेरे जालिम अंग्रेजों को सात समुन्द्र पार खदेड़कर स्वाधीन होने के लिए मचल रही थी।

बनारस के गवर्नमेन्ट संस्कृत कॉलेज पर भी कुछ देशभक्त युवक जब धरना दे रहे थे, उनको गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हीं में से एक छोटे से बालक को नारे लगाते देख, पुलिस वालों का खून–खौल उठा। एक पुलिस वाले ने तो तमाचा मारते हुए उसे हथकड़ी भी पहना दी। पुलिस उसे घसीटती हुई कोर्ट ले गई। आखिर उसे कोर्ट में अंग्रेज जज के सामने पेश किया गया और मात्र भारत माता की जय बोलने के अपराध में जज ने उसे कोड़ों की भयंकर सजा दी।

कोड़े खाकर उसी समय अहिंसा का वह वीर पुजारी आग का गोला बनकर धधक उठा। उसने वहीं भरी अदालत में यह प्रतिज्ञा भी की कि जब तक ईट का जवाब पत्थर से नहीं दूँगा तब तक कभी चैन से नहीं बैठूँगा।

तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हारे पिता का नाम क्या है? तुम्हारा निवास स्थान कहाँ है? ये तीन प्रश्न भी उसी चौदह वर्षीय बालक से बड़े ही रोबीले स्वर में जब मजिस्ट्रेट ने पूछे तो उसने उत्तर में जो कहा वह यही कहा– अदालत सुने और कान खोलकर सुने–मेरा नाम है– आजाद! आजाद!! आजाद!!! मेरे पिता श्री का नाम है– स्वाधीन! स्वाधीन!! स्वाधीन!! और मेरा निवास स्थान है– जेलखाना! या कहना चाहिए कारागार! कारागार!! कारागार!!!

उस अल्पायु बालक के इन उत्तरों को ज्यों ही सुना अदालत ने दाँतो तले अँगुली ही दबा ली, उसने आज्ञा दी–इस दीवाने को पन्द्रह बेतें और लगाई जायें। पर इससे भी वह यज्ञोपवीतधारी देशभक्त दीवाना भला कहाँ डरने वाला था? उसी समय देखते ही देखते कोमल शरीर पर तड़ातड़ बेंत पड़ने लगे, पर उस बालक के मुख से आह तक भी न निकली। वह वीरधीर बालक तो प्रत्येक ही बेंत के आघात पर बस यही उद्घोष करता रहा– वन्दे मातरम्!, भारतमाता की जय। भारतमाता की जय!! उस वीर–धीर बालक का नाम था चन्द्रशेखर। इसी लोमहर्षक अति भयंकर घटना के बाद बालक का वही नाम जो उसने अदालत को बताया था, उपनाम उसका बना और कालांतर में यही आजाद उपनाम, सुनाम बनकर सदा–सदा के लिए अमर हो गया।

उन १५ बेंतों के प्रत्येक ही आघात ने चन्द्रशेखर के बालहृदय को अंग्रेजों के प्रति घृणा से ही भर दिया था। बालक चन्द्रशेखर विदेशी अत्याचारी अंग्रेजों के साम्राज्य को देश से उखाड़ फेंकने के लिए संकल्पना ही कर बैठा था। दिन रात वह यही सोचा करता था कि कैसे इन अंग्रेजों को यहां से खदेड़ा जाये।

फरार होकर आजाद उस बम पार्टी में सम्मिलित हो गये जो देश को स्वतन्त्र कराने के लिए भारत में उस समय अच्छी तरह से काम कर रही थी, जो देश से अंग्रेजी शासन को सशस्त्र क्रांति के बल पर उखाड़ फेंकना चाहती थी। रामप्रसाद बिस्मिल, राजेन्द्र लाहिड़ी, अशफाक उल्ला खाँ सचीन्द्रनाथ सान्याल जैसे नौजवान इसी दल के ही सदस्य थे जो सिर से कफन बाँधकर अंग्रेजी सकार को निकलाने के लिए प्रयत्न कर रहे थे। यह दल वही था जो बमों, पिस्तौलों और बन्दूकों से परा धीनता के जुए को उतार फेंकना चाहता था। सशस्त्र क्रान्ति के आयोजन के लिए दल को भारी मात्रा में धन की आवश्यक थी ही। उस समय के पुँजीपति जितने भी थे, वे सब ही हृदय से अंग्रेजों के ही भक्त थे, इसीलिए क्रान्तिकारियों को उनसे धन की सहायता मिल ही नहीं पा रही थी। अन्ततः लाचार हाकर क्रान्तिकारियों को डाका डालकर धन प्राप्त करने का मार्ग ही अपनाना पड़ा। क्रान्तिकारियों ने शाहजहाँपुर के पास काकोरी रेलवे स्टेशनके निकट ट्रेन रोक कर सरकारी खजाने को ज्यों ही लूटा, अंग्रेजी सरकार दहल गयी–भय से काँप उठी।

अंग्रेजी सरकार ने इस ऐतिहासिक ट्रेन डकैती काण्ड के प्रायः सभी अभियुक्तों को गिरफ्तार भी कर लिया था, किन्तु चन्द्रशेखर आजाद हाथ ही न आ सके थे, क्योंकि उनकी तो प्रतिज्ञा ही यह थी– फिरंगी मुझे जिन्दा न पकड़ सकेगे।

सन् १९२९ में वाइसराय की गाड़ी पर बम फेंकने की योजना में भी आजाद की भूमिका प्रधान रूप में थी। इतना ही नहीं, असेम्बली भवन में बम फेंकने की योजना भी आजाद द्वारा ही रची गयी थी। भगतसिंह और सुखदेव को जेल से छुड़ाने की योजना भी आजाद ने रची परन्तु देश का दुर्भाग्य या अंग्रेजों का सौभाग्य कहिए असमय में ही वह योजना असफल हो गई। इसके बाद तो फिर जो होना था वही हुआ ही। जब दीपक ही घर को फूँकने लगे कैसे किस्मत फूट न जाये। दल के ही कुछ कायरों के कारण रामप्रसाद बिस्मिल और अशफाकउल्ला जैसों को फाँसी पर चढ़ना पड़ा। देश के वे दीवाने हँसते–हँसते ही फाँसी के झूलों पर झूल गये। बिस्मिल और अशफाक के बाद सुखदेव, भगतसिंह और राजगुरु भी २३ मार्च १९३१ को फाँसी पर चढ़ गये। सतलुज की लहरों में आज भी उनकी चिता की राख गरम है। और भविष्य में भी वह राख कभी ठंडी पड़ जायेगी, यह भला कैसे संभव है। स्वतन्त्र भारत के आकाश में इन शहीदों के रक्त की ही लाली है। ७ अक्टूबर १९३० को जिस दिन भगतसिंह, सुखेदव और राजगुरु को फाँसी की सजा सुनाई गई, उस दिन आजाद बहुत ही क्षुब्ध हो उठे थे।

आजाद सन् १९३० के अन्त में कानपुर को छोड़कर इलाहाबाद चले गये। इलाहाबाद में ही एक दिन सुबह जब पण्डित जवाहरलाल नेहरू आनन्द भवन के अपने कमरे में लेटे हुए थे, सहसा ही उनके कक्ष का द्वार खुला। जवाहरलाल ने देखा कि एक हष्ट–पुष्ट तेजस्वी नौजवान सामने खड़ा है।

उस युवक ने गम्भीरता से कहा– मेरा नाम चन्द्रशेखर आजाद है, मैंने आज तक जो कुछ भी किया है, वह देश की आजादी के लिए ही किया है। मैंने उनका ही खून बहाया है जो भारत की स्वतन्त्रता के शत्रु थे। इस समय मैं पुलिस से चारों ओर से घिरा हुआ हूँ, पुलिस मेरे पीछे बुरी तरह से हाथ धोके पड़ी हुई है, आप बताएँ कि मैं क्या करूँ?

जवाहरलाल युवक का मुँह देखते ही रहे, वे उसे कुछ उत्तर ही न दे सके। आजाद पाँच मिनट तक उत्तर की प्रतीक्षा भी करते रहे पर जब कोई उत्तर ही न मिला, दरवाजे से बाहर निकल आये।

और उसके दो घण्टे बाद ही जवाहरलाल ने सुना कि चन्द्रशेखर आजाद अब इस दुनिया में नहीं है। अल्फ्रेड पार्क में वे पुलिस की गोलियों का मुकाबला करते हुए वीरगति को प्राप्त हो गये।

हाय, हा हन्त! २७ फरवरी सन् १०३१ का वह दुर्भाग्यिपूर्ण दिन! जब दस बजे प्रयाग के अल्फ्रेड पार्क में माँ

भारतीय का वह सपूत वीर आजाद पुलिस से चारों ही तरफ से घिर गया। आजाद राम नाम का तहमद बाँधे नंगे बदन थे ही ओर उनकी कटिल में पिस्तौल भी बंधा हुआ था ही। जब असंख्य अनगिनत पुलिस उनके सामने बन्दूक और पिस्तौल तानकर गोलियाँ चलाने लगी तो आजाद ने भी अपनी कमर से पिस्तौल निकाला और एक पेड़ की आड़ लेकर गोलियों के जवाब में गोलियाँ चलाने लगे। उनके माउज़र पिस्तौल में केवल बारह गोलियाँ ही उस समय थी, पर उनकी एक-एक गोली का निशाना इतना सही था कि यदि पुलिस पेड़ों की आड़ में न होती तो आजाद की बारह गोलियों से सैकड़ों की पंक्ति मौत के घाट वहाँ उतर जाती।

पर जब आजाद की पिस्तौल में केवल एक ही गोली रह गई तो उन्होंने कहा-आजाद आजाद है, वह अंग्रेजों की गोली से नहीं, अपनी ही गोली से मरेगा, और फिर अपने मस्तक में अपनी ही गोली मारकर भारत माता का वह सपूत चिर निद्रा में सो गया।

आजाद भारत में सब कुछ है पर आज भी भारतमाता की आँखें गीली ही हैं। वह अल्फ्रेड पार्क के फूलों में आज भी अपने आजाद को ढूँढ रही है। न जानें कब माँ भारतीय का वह वीर सपूत चिर निद्रा से जागेगा?

आजाद देश में आजाद जैसे शहीदों के ईट और पत्थरों के ताजमहल चाहे न हों पर इतिहास का यह अमर शहीद, जिसके नाम से ही तत्कालीन सरकार काँपती थी, अपने वीरतापूर्ण कार्यों से युग-युग में अमर रहेगा ही।

कीर्तिर्यस्य सः जीवति जिसका यश अमर है वह सदा जीवति रहता है। वीर ही नहीं, विप्रवीर आजाद इसीलिए भी सदा जीवित रहेंगे क्योंकि उन्होंने अपने पराक्रमी अनुपम जीवन से अथर्ववेद के इस मंत्र को भी व्यावहारिकता के धरातल पर पूर्ण रूप से सार्थक कर दिखाया-

अहमस्मि सहमान उत्तरो नाम भूम्याम्।

अभीषाडस्मि विश्वाषाडाशामाशां विषासहिः।।अथर्व०१२.१.१५४

राष्ट्र-भूमि पर मैं साहसी हूँ, भूमि पर मैं उत्कृष्ट भी हूँ। दुश्मन से मुकाबला पड़ने पर उसके छक्के छुड़ा देने वाला भी हूँ। मुझमें सब ही शत्रुओं को परास्त कर डालने की असीम शक्ति है-प्रत्येक दिशा में।

अन्त में आकर यहीं यह भी तो सोचने का विषय है कि जैसी वीरता इस वेदमंत्र में वर्णित है वैसे ही वीरता उस आजाद के व्यक्तित्व में थी। पर थी भी क्यों? उनमें ऐसी ही वीरता इसीलिए थी क्योंकि वे भारत की उसी बलिदानी मिट्टी में तो उत्पन्न हुए थे जिसने विदेशी विधर्मी मुगल साम्राज्य से लोहा लेनेवाले राणाप्रताप, शिवाजी, वन्दा वैरागी और गुरु गोविन्दसिंह जैसे वीरों को उत्पन्न किया था। भारत की मिट्टी का कण-कण ऐसे ही वीरों के चरणों की पावन रज से आज भी अपने आप को केवल पावन पुनीत ही नहीं अपितु धन्य भी मानता है। श्री चन्द्रशेखर आजाद भी ऐसे ही वीरों की श्रेणी में आने वाले अनुपम ओजस्वी वीर थे। भारत की वीर परम्परा में वे एक नया ही अध्याय लिखकर गये जो स्वाधीनता आन्दोलन के इतिहास में मजबूती से जुड़ा हुआ है। इतना ही नहीं, आजाद ने अपने चमकते हुए खून से जो वीरता का नया अध्याय स्वाधीनता संघर्ष में लिखा, देश उस पर सदा ही अभिमान करेगा। नमन, बहुसंख्य नमन उस वीरात्मा आजाद को! जो जीते-जी फिरंगियों के हाथ न आया! नमन उस वीर माता जगरानी देवी को भी जिसने चन्द्रशेखर आजाद जैसी वीर सन्तान उत्पन्न करके राष्ट्र को समर्पित की। वह परलोकवासी माता आज भी अपने चन्द्रशेखर की वीरता को याद करके अवश्य कहीं प्रसन्न हो रही होगी, क्योंकि-

सुतविक्रमे सति न नन्दति का खलु वीरसूः।। (कुमार०१२-५९)

वीर सन्तान उत्पन्नर करनेवाली माता अपने बेटे की बहादुरी देखकर प्रसन्न होती ही है।

---000---

तप की महिमा

पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वतः।
अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते शृतास इद्वहन्तस्तत्समाशत।।

– ऋ० ९।८३।१

ब्रह्मणः+पते–ज्ञान के स्वामिन्! परमेश्वर!
ते पवित्रम्–तेरा पवित्र रक्षणादि
विततम्–सर्वत्र फैला हुआ है।
प्रभुः–तू सर्वशक्मिान् भगवान्
गात्राणि–शरीरों को, शरीर के अवयवों को
विश्वतः–सब ओर से, सब प्रकार से
परि+एषि–पूर्णतया व्याप्त कर रहा है,
तत्+आमः–(तेरे) उस ज्ञानमय आनन्द को
अतप्ततनूः–शारीरिक तप–शून्य
न अश्नुते–नहीं प्राप्त कर सकता
श्रृतासः–(किन्तु) परिपक्व महात्मा
तत् वहन्तः–उस आनन्द को धारण करते हुए
इत्–ही
सम्+आशत–भली प्रकार प्राप्त करते हैं।

व्याख्या

प्रभु की कृपा (रक्षा) सर्वत्र है। बाहर के पदार्थों की क्या बात, वह तो हमारे अङ्ग–अङ्ग में व्याप्त है। वह आनन्दमय है, उसका आनन्द भी सर्वत्र है, किन्तु–

अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते।

जिसने शरीर को तप की अग्नि में तपाया नहीं, वह उस आनन्द को प्राप्त नहीं कर सकता।

कच्चा घड़ा पानी में डालने से गल जाता है, वह जल नहीं ला–सकता। इसी भाँति जिन्होंने शरीर और आत्मा को तप की भट्टी में डालकर इसे पक्का नहीं बनाया, वे प्रभु के आनन्द को नहीं पा सकते। आनन्द–प्राप्ति के लिए पहले अपने सारे दोष दूर करने चाहिएँ। दोष तप से दूर होते हैं, जैसाकि मनु महाराज ने कहा है–

तपसा किल्बिषं हन्ति–तप से दोष का नाश करता है।

कोई हाथ ऊपर उठाये रखता है और समझता है कि मैं तप कर रहा हूँ। कोई एक टाँग पर खड़ा रहकर तप करने की चेष्टा करता है। कोई चारों ओर अग्नि जलाकर सूर्य की कड़कती–चिलकती धूप में बैठ जाता है और समझता है कि मैं तप कर रहा हूँ। कोई अपने शरीर को तप्त मोहरों से दगवाने को तप मानता है, किन्तु ये तप नहीं हैं। महाभारत के शान्तिपर्व में आता है–

चतुर्णां ज्वलतां मध्ये यो नरः सूर्यपञ्चमः। तपस्तपति कौन्तेय! न तत्पंचतपः स्मृतम्।।

हे कुन्तिपुत्र! जो चार अग्नियों के बीच में बैठ जाता और सूर्य को पाँचवाँ बनाकर तप करता है, वह तप पञ्चाग्नि तप नहीं है।

फिर तप क्या है, इसका उत्तर वहीं दे रखा है–

पञ्चानामिन्द्रियाग्नीनां विषयेन्धनचारिणाम्। तेषां तिष्ठति यो मध्ये तद्वै पञ्चतपः स्मृतम्।।

विषयरूप ईंधन में विचरनेवाले पाँच इन्द्रियरूप अग्निन्नयों के मध्य में जो बैठता है, वही पञ्चग्नितप मानना चाहिए।

विषय सचमुच आग है। इन जाज्वल्यमान विषय–अग्नियों के बीच में रहता हुआ जो इनसे जलता नहीं, वह तपस्वी है।

वेद में तप की महिमा एवं आवश्यकता का अनेक स्थानों पर वर्णन है। उदाहरणार्थ यहाँ एक स्थल उद्धृत

करते हैं–

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदस्तपो दीक्षामुपनिषेदुरग्रे।

कल्याण की कामना करनेवाले, आनन्द–प्राप्त ऋषि पहले तप और दीक्षा का अनुष्ठान करते हैं।

जगत् में कौन ऐसा प्राणी है, जो सुख न चाहता हो, अपने भले की कामना न करता हो, परन्तु कल्याण की कामना करते हुए भी लोग दुःखी देखे जाते हैं। इसका एकमात्र कारण तप का अभाव है। लोग भूल जाते हैं कि–

स्वादो नैव विना स्वेदं विश्रामो न श्रमं विना।

बिना पसीने के स्वाद नहीं, बिना परिश्रम के विश्राम नहीं।

यदि सुख की चाहना है तो तप की साधना अवश्य करनी चाहिए।

योगदर्शन में तप का फल बतलाया है–

कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः। –यो० २।४३

तप से सारी अशुद्धियाँ दूर हो जाती हैं, अशुद्धियों के विनाश से इन्द्रियों और शरीर को विशेष सिद्धि मिलती है।

शरीर और इन्द्रियों को हृष्ट–पुष्ट बनाने के लिए तप अत्यन्त आवश्यक है। तप से सभी कुछ साध्य होता है, इसी भाव से वेद में कहा है–

श्रृतास इद्वहन्तस्तत्समाशत–

तप के द्वारा जो पक गये हैं, वे ही इस आनन्द को धारण कर सकते हैं, वे इसका रस ले–सकते हैं।

अतः आनन्दाभिलाषी जन को चाहिए कि वह काम–क्रोधादि इन्द्रियों के विषय को जीतकर, शारीरिक, मानसिक और आत्मिक तप के द्वारा ऐहिक–पारलौकिक सुख की सिद्धि प्राप्त करे।

इस मन्त्र में एक उत्तम सङ्केत किया है। सामान्य जनों तक को यह ज्ञात है कि आनन्द भगवान् से ही मिल सकता है, किन्तु उस भगवान् को वे अज्ञानी मक्का, काशी, गया, मथुरा, रामेश्वरम् आदि तीर्थों में खोजने केलिए भटकते फिरते हैं, परन्तु मनोरथ का मनका नहीं मिलता। वेद कहता है–अरे! कहाँ भटक रहा है, प्रभु तेरे भीतर है। तेरे अङ्ग–अङ्ग में वह रम रहा है। उसे पाने के लिए, मिलने के लिए बाहर भटकने की आवश्यकता नहीं है, अपने भीतर जहाँ चाहे उसे देख सकता है।

उसे तू पा ले तो तेरे सब मल धुल जाएँ, तू पवित्र हो जाए, क्योंकि वह पवित्र है और उसका पवित्र तेज सर्वत्र फैल रहा है, अतः तेरे अङ्ग–अङ्ग में भी वह पवित्रता का संचारक विद्यमान है, अतः पाप–वासना से उन्हें मलिन न कर। सोच, समझ, हृदय के नेत्र खोल।

--000--

– आवश्यक सूचना –

आर्य समाज में आप लोगों द्वारा श्रावणी पर्व धूम–धाम से मनाया गया होगा, उसके समाचार व फोटो अगले अंक मे प्रकाशन हेतु सभा कार्यालय में भेजें।

जिन आर्य समाजो ने वार्षिक वृंतात नहीं भेजा है, वे भी जल्द से जल्द चित्रावली व वार्षिक वृंत्तात भरकर तथा दशांश सभा कार्यालय को भेजकर रसीद प्राप्त करें।

पं. सत्यवीर शास्त्री — प्रधान

आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश व विदर्भ, सदर, नागपुर

अशोक यादव — मंत्री

।। ओ३म्।।

कुण्वन्तो विश्वामर्यम् – सारे विश्वको आर्य बनाओ

आ३म् भुर्भस्वः। तत्सवितुर्वरेण्य भर्गो देवस्यं धीमही। धीयो यो नः प्रचोदयात यजु : अ ३६।। मं. ३।।

ता. अचलपूर जि. अमरावती (महाराष्ट्र) फोन : २६०५७१ (कार्यालय)

सब कार्य धर्मानुसार अर्थात सत्य और असत्य का विचार करके करना चाहिये। दयानंद सरस्वती

वर्ष २०१७–१८ के चुनाव संपन्न

१) प्रधान – श्री. शरदराव ला. कोसरेजी

२) उपप्रधान – श्री. मधूकरराव शे. काकड

३) उपप्रधान – श्री विनायकराव ना. हरणेजी

४) मंत्री – श्री. रामेश्वरराव रामचंद्रजी वडूरकर

५) कोषाध्यक्ष – श्री. ओमप्रकाश ज. बोबडेजी

६) उपमंत्री – श्री. जानराव ल. उकेजी

७) पुस्तकाध्यक्ष – श्री. सुरेशराव के. सिरसकारजी

८) प्रचारमंत्री – श्री. मधूकरराव म. काळेजी

अंतरंग सभा सदस्य –

९) श्री. भास्करराव ना. हरणेजी

१०) श्री. उमेशप्रसाद मा. दुबेजी

११) श्री. लक्ष्मणराव गुं. कावरेजी

१२) श्री. पुंडलिकराव कैकाडे

१३) श्री. सुरेशराव ज. उपासेजी

सभा प्रधान पं. सत्यवीर शास्त्री व मंत्री अशोक यादव ने हार्दिक बधाई देते हुये सभा को मजबुती प्रदान करने व एकता बनाये रखने कि अपिल कि है।

आर्य सेवक, नागपुर

प्रति, _____

_____

प्रकाशक : अशोक यादव, प्रबंधक संपादक एवं मंत्री आर्य प्रतिनिधि सभा
मध्यप्रदेश एवं विदर्भ, नागपुर फोन : ०७१२-२५९५५५६ द्वारा उक्त सभा के लिये प्रकाशित एवं प्रसारित